

कल्याण

मूल्य १० रुपये



वर्ष
९२

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या
३



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



नारद-भक्ति-संवाद

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



कल्याण

वन्दे वन्दनतुष्टमानसमतिप्रेमप्रियं प्रेमदं पूर्णं पूर्णकरं प्रपूर्णनिखिलैश्वर्यैकवासं शिवम् ।
सत्यं सत्यमयं त्रिसत्यविभवं सत्यप्रियं सत्यदं विष्णुब्रह्मानुतं स्वकीयकृपयोपात्ताकृतिं शङ्करम् ॥

वर्ष
९२

गोरखपुर, सौर चैत्र, वि० सं० २०७४, श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, मार्च २०१८ ई०

संख्या
३

पूर्ण संख्या १०९६

नारदजीका भक्तिको उपदेश

वृथा खेदयसे बाले अहो चिन्तातुरा कथम् । श्रीकृष्णचरणाभ्भोजं स्मर दुःखं गमिष्यति ॥
द्रौपदी च परित्राता येन कौरवकश्मलात् । पालिता गोपसुन्दर्यः स कृष्णः क्वापि नो गतः ॥
त्वं तु भक्तिः प्रिया तस्य सततं प्राणतोऽधिका । त्वयाहूतस्तु भगवान् याति नीचगृहेष्वपि ॥
सत्यादित्रियुगे बोधवैराग्यौ मुक्तिसाधकौ । कलौ तु केवला भक्तिर्ब्रह्मसायुज्यकारिणी ॥
इति निश्चित्य चिद्रूपः सद्रूपां त्वां ससर्ज ह । परमानन्दचिन्मूर्तिः सुन्दरीं कृष्णवल्लभाम् ॥

[नारदजीने कहा —] हे बाले ! तुम व्यर्थ ही अपनेको क्यों खेदमें डाल रही हो ? अरे ! तुम इतनी चिन्तातुर

क्यों हो ? भगवान् श्रीकृष्णके चरणकमलोंका चिन्तन करो, उनकी कृपासे तुम्हारा सारा दुःख दूर हो जायगा । जिन्होंने कौरवोंके अत्याचारसे द्रौपदीकी रक्षा की थी और गोपसुन्दरियोंको सनाथ किया था, वे श्रीकृष्ण कहीं चले थोड़े ही गये हैं । फिर तुम तो भक्ति हो और सदा उन्हें प्राणोंसे भी प्यारी हो; तुम्हारे बुलानेपर तो भगवान् नीचोंके घरोंमें भी चले जाते हैं । सत्य, त्रेता और द्वापर—इन तीन युगोंमें ज्ञान और वैराग्य मुक्तिके साधन थे; किंतु कलियुगमें तो केवल भक्ति ही ब्रह्मसायुज्यकी प्राप्ति करानेवाली है । यह सोचकर ही परमानन्दचिन्मूर्ति ज्ञानस्वरूप श्रीहरिने अपने सत्यस्वरूपसे तुम्हें रचा है; तुम साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्रकी प्रिया और परम सुन्दरी हो । [पद्मपुराण]

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण २,००,०००)

कल्याण, सौर चैत्र, वि० सं० २०७४, श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, मार्च २०१८ ई०

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- नारदजीका भक्तिको उपदेश	३	१६- संत श्रीदेवराहा बाबाके वचनामृत (वैकुण्ठवासी श्री श्री	
२- कल्याण	५	१००८ श्रीगोकुलदासजीद्वारा संकलित)	
३- श्रीकनकभवन—भगवान् श्रीरामका लीला-निकेतन		[प्रेषक—श्रीलालनप्रसादजी सिन्हा]	२४
[आवरणचित्र-परिचय]	६	१७- पथिक [आध्यात्मिक कथा] (श्रीसत्यप्रकाशजी किरण)	२५
४- श्रीकनकभवन-बिहारीकी छबि-माधुरी	७	१८- ज्ञान-कोष [प्रेरक कथा]	२६
५- भगवान्की प्राप्ति करानेवाले उत्तम गुण और आचरण		१९- अनन्य भगवत्प्रेमसे ही जीवनकी सार्थकता	
(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	८	(श्रीभैरवलालजी परिहार)	२७
६- संसारके सुखोंकी अनित्यता [बोध-कथा]	१०	२०- सपनोंको यथार्थमें कैसे बदलते हैं ?	
७- जीवनकी प्रयोगशाला		(श्रीदीनानाथजी झुनझुनवाला)	३१
(पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल, एम०ए०, बी०टी०)	११	२१- राम-दर्शन [कविता] (सैयद कासिमअली विशारद)	३२
८- जगत्का स्वरूप	१२	२२- सादगी [कहानी] (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र')	३३
९- दैवी विपत्तियाँ और उनसे बचनेका उपाय		२३- मूर्ति या छबिमें भगवान् (रायसाहेब श्रीकृष्णलालजी बाफणा) ..	३६
(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ...	१३	२४- सदुपदेश [कविता] (गिरधर कविराय)	३७
१०- आनन्द-स्वरूप (संत श्रीभूपेन्द्रनाथजी सान्याल)	१५	२५- स्वामी श्रीविशुद्धानन्दजी सरस्वती [संत-चरित]	
११- भक्ति—अर्थ एवं स्वरूप		(महामहोपाध्याय पं० श्रीप्रमथनाथजी तर्कभूषण)	३८
(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	१६	२६- गोमूत्रसे कैसरका सफल इलाज (श्रीउमेशजी पोरवाल)	४१
१२- संसारमें रहनेकी विद्या		२७- साधनोपयोगी पत्र	४३
(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	१७	२८- ब्रतोत्सव-पर्व [वैशाखमासके व्रत-पर्व]	४५
१३- मेरे कारण कोई झूठ क्यों बोले [प्रेरक-प्रसंग]	१८	२९- कृपानुभूति	४६
१४- श्रीसूरदासजीका होली-वर्णन (पं० श्रीशिवनाथजी दुबे)	१९	३०- पढ़ो, समझो और करो	४७
१५- मैं तुम्हारे अंग-संग हूँ [प्रेषक—श्री एम०के० रायजी]	२३	३१- मनन करने योग्य	५०

चित्र-सूची

१- कनकभवनकी दिव्य झाँकी	(रंगीन)	आवरण-पृष्ठ
२- नारद-भक्ति-संवाद	(")	मुख-पृष्ठ
३- कनकभवनकी दिव्य झाँकी	(इकरंगा)	६
४- भगवान् बुद्धका गृहत्याग	(")	३१
५- स्वामी श्रीविशुद्धानन्दजी सरस्वती	(")	३८

एकवर्षीय शुल्क

₹ २५०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनन्द भूमा जय जय॥
जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥
जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

विदेशमें Air Mail }
शुल्क

वार्षिक US\$ 50 (₹ 3000)
पंचवर्षीय US\$ 250 (₹ 15000)

{ Us Cheque Collection
Charges \$6 Extra

पंचवर्षीय शुल्क

₹ १२५०

संस्थापक—ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

आदिसम्पादक—नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

सम्पादक—राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक—डा० प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : gitapress.org

e-mail : kalyan@gitapress.org

09235400242/244

सदस्यता-शुल्क—व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें।

Online सदस्यता-शुल्क—भुगतानहेतु-gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।

अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

याद रखो—मानव-जीवनकी सफलता भगवत्-प्राप्तिमें है, विषयभोगोंकी प्राप्तिमें नहीं। जो मनुष्य जीवनके असली लक्ष्य भगवान्को भूलकर विषयभोगोंकी प्राप्ति और उनके भोगमें ही रचा-पचा रहता है, वह अपने दुर्लभ अमूल्य जीवनको केवल व्यर्थ ही नहीं खो रहा, वरं अमृत देकर बदलेमें भयानक विष ले रहा है।

याद रखो—बहुत जन्मोंके बाद बड़े पुण्यबल तथा भगवत्कृपासे जीवको मानव-शरीर प्राप्त होता है; इन्द्रियोंके भोग तो अन्यान्य योनियोंमें भी मिलते हैं, पर भगवत्प्राप्तिका साधन तो केवल इसी शरीरमें है, इसको पाकर भी जो मनुष्य विषयभोगोंमें ही फँसा रहता है—वह तो पशुसे भी अधिक मूढ़ है।

याद रखो—यदि तुमने इस जीवनमें भगवान्को नहीं प्राप्त किया—कम-से-कम भगवत्प्राप्तिके पथपर नहीं आ गये तो तुम्हें पीछे इतना पछताना पड़ेगा कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। अतः हाथमें आये हुए इस महान् सुअवसरके एक-एक क्षणको बड़ी ही सावधानीके साथ जीवनके असली लक्ष्य भगवत्प्राप्तिके साधनमें ही लगाना चाहिये।

याद रखो—यहाँके जिन धन-ऐश्वर्य, पद-अधिकार, यश-कीर्ति और मान-मर्यादाके लिये तुम पागल हो रहे हो; उनमेंसे कोई भी, कभी भी, तुमको तृप्ति नहीं दे सकेंगे। उनके अधूरेपनमें कभी पूर्णता आयेगी ही नहीं, और इस कारण तुम्हारी कमी कभी पूरी होगी ही नहीं।

याद रखो—इन विषयोंकी प्राप्तिके लिये जो तुम दिन-रात भाँति-भाँतिके नये-नये पाप कर रहे हो, इसीमें अपना कल्याण समझ रहे हो और गौरवका अनुभव कर रहे हो, यह तुम्हारे लिये बहुत ही घातक होगा। इससे तुम्हें जीवनमें कभी शान्ति और सुख तो मिलेगा ही नहीं; वरं वह सदा निराशा, दुःख, चिन्ता, शोक और विषादसे भरा रहेगा। मरनेके बाद भी तुम्हें इस पापके भारी बोझको ढोकर अपने साथ ले जाना पड़ेगा और विविध योनियोंमें अनेकों प्रकारके भीषण दुःख भोगनेके लिये बाध्य होना पड़ेगा।

याद रखो—बुद्धिमान् मनुष्य वही है, जो इन दुःख उत्पन्न करनेवाले विषयभोगोंमें मनको नहीं फँसाता और भगवान्का स्मरण करता हुआ जगत्के सारे काम उसी प्रकार करता है, जिस प्रकार नाट्यमंचपर अभिनेता अपने स्वाँगके अनुसार खेल करता है। जो केवल प्रभुको रिझानेके लिये सारे कार्य करता है, असलमें वही सच्चा मनुष्य है।

याद रखो—तुम मनुष्य हो; अपने मनुष्यत्वको सदा जगाये रखो। एक क्षणके लिये भी भगवान्को मत भूलो। सदा स्मरण रखो कि यहाँ इस शरीरमें भगवान्ने तुमको पशुकी भाँति केवल इन्द्रियभोगोंके भोगके लिये ही नहीं भेजा है। तुम्हें उस बहुत बड़ी सफलताको प्राप्त करना है, जिससे अबतक तुम वंचित रहते आये हो। वह सफलता है—भगवत्प्राप्ति!

याद रखो—इसी सफलताको लक्ष्य बनाकर जो मनुष्य निरन्तर भगवान्में मन रखकर ही जगत्के कार्य करता है, उनमें कभी मनको फँसाता नहीं है—वही चतुर है। जीवननिर्वाहके लिये जो काम आवश्यक हो, उसे करो, पर करो भगवान्को याद रखते हुए ही। लक्ष्यपर दृष्टि रखकर ही।

याद रखो—भगवान्से विरोधी विषयको भूलकर भी ग्रहण करना बहुत बड़ी हानि है। अतएव वही बात सोचो, वही काम करो, जो शुभ है। शुभ वही है, जो भगवान्के अनुकूल है। आँखोंसे कभी बुरी चीजें, गन्दे दृश्य, स्त्रियोंके हाव-भाव मत देखो; कानोंसे कभी गन्दी बात मत सुनो; जीभसे कभी गन्दे—अशुभ शब्द मत उच्चारण करो। आँखोंसे भगवत्-सम्बन्धी वस्तुओं और जीभसे भगवान्के नाम-गुण-लीला, धाम, तत्त्व और महत्त्वका वर्णन करो। ऐसा करनेपर ही तुम जीवनकी सफलताको प्राप्त कर सकोगे। **‘शिव’**

याद रखो—भगवान्से विरोधी विषयको भूलकर भी ग्रहण करना बहुत बड़ी हानि है। अतएव वही बात सोचो, वही काम करो, जो शुभ है। शुभ वही है, जो भगवान्के अनुकूल है। आँखोंसे कभी बुरी चीजें, गन्दे दृश्य, स्त्रियोंके हाव-भाव मत देखो; कानोंसे कभी गन्दी बात मत सुनो; जीभसे कभी गन्दे—अशुभ शब्द मत उच्चारण करो। आँखोंसे भगवत्-सम्बन्धी वस्तुओं और जीभसे भगवान्के नाम-गुण-लीला, धाम, तत्त्व और महत्त्वका वर्णन करो। ऐसा करनेपर ही तुम जीवनकी सफलताको प्राप्त कर सकोगे। **‘शिव’**

(श्रीत्रिलोकीदासजी खण्डेलवाल)



भगवान् श्रीरामका अवतार त्रेतायुगमें हुआ। यद्यपि अयोध्या त्रेतायुगसे भी पूर्वकी नगरी है, किंतु प्रसिद्धि है कि कनकभवनका प्रथम निर्माण श्रीरामके लीला-निकेतनके रूपमें महारानी कैकेयीके अनुरोधपर महाराज दशरथद्वारा करवाया गया था। जब श्रीराम और लक्ष्मण महर्षि विश्वामित्रके साथ चले गये तो महारानी कैकेयीको स्वप्नमें एक स्वर्णभवनका आभास हुआ। कैकेयीने उस स्वर्णभवनके अनुरूप ही एक भवनके निर्माण करनेका महाराज दशरथसे अनुनय किया और महाराजने विश्वकर्माकी देखरेखमें श्रेष्ठ शिल्पकारोंके हाथोंसे कलात्मक कनकभवनकी रचना करवायी। सीता-स्वयंवरके पश्चात् जब श्रीराम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न जनकपुरीमें विवाहित होकर अयोध्या लौटे तो महारानी कैकेयीने उस नव-निर्मित कनकभवनको अपनी बहू सीताजीको भेंट कर दिया। इसके बाद कनकभवन श्रीराम और जगन्माता सीताजीका आवास बन गया और तभीसे यह भवन आज सहस्रों शताब्दियोंके बादतक भी जन-मानसका आराध्य-स्थल बना हुआ है।

कनकभवन-बिहारीकी छबि-माधुरी

द्वापरयुग

त्रेतामें भगवान् श्रीरामके बाद उनके पुत्र कुशने कनकभवनमें श्रीराम और सीताजीकी मूर्तियाँ स्थापित कीं, किंतु कालान्तरमें अयोध्याके राजवंशके पराभवके बाद अयोध्याका रूप बदल गया और इसीमें कनकभवन भी जर्जर होकर ढह गया। कनकभवनसे प्राप्त हुए विक्रमादित्यकालीन एक शिलालेखके अनुसार द्वापरमें जब श्रीकृष्ण जरासंधका वधकर प्रमुख तीर्थोंकी यात्रा करते हुए अयोध्या आये और कनकभवनके टीलेपर पहुँचे तो उन्होंने एक पद्मासना देवीको तपस्या करते हुए देखा और टीलेसे श्रीराम-सीताकी मूर्तियाँ निकालकर उस देवीको भेंटकर वे द्वारका चले गये।

उस देवीने कनकभवनका जीर्णोद्धार करवाकर वे मूर्तियाँ पुनः स्थापित कीं। इस प्रकार कलियुगके प्रारम्भ होनेतक ये मूर्तियाँ कनकभवनमें सेव्य रहीं।

कालान्तरमें महाराज विक्रमादित्यने आजसे लगभग २०७५ वर्ष-पूर्व कनकभवनका पुनः निर्माण करवाया। गुप्तकालमें समुद्रगुप्तने भी अयोध्याको अपनी राजधानी बनाकर कनकभवनका जीर्णोद्धार करवाया। सन् १७६१ ई० में भक्त कवि श्रीरसिकअली अयोध्या आये। जब वे कनकभवनमें दर्शनहेतु गये तो वहीं समाधिस्थ हो गये और उन्हें साक्षात् सीतारामजीके दर्शन हुए। फिर वे भी कनकभवनके जीर्णोद्धारमें जुटे। उन्होंने कनकभवनके अष्टकुंजका निर्माण शुरू किया, किंतु अर्थाभावके कारण यह पूरा नहीं हो सका।

अयोध्याके वर्तमान कनकभवनके निर्माणका प्रारम्भ

ओरछा-राज्यके पूर्व नरेश सवाई महेन्द्र श्रीप्रतापसिंहकी धर्मपत्नी महारानी वृषभानुकुँवरिद्वारा वैशाख दशमी सं० १९४४ (सन् १८८७ ई०)-को हुआ और शेख कादर बख्शकी देखरेखमें बनवाकर उन्होंने वैशाख शुक्ला षष्ठी सं० १९४८ (सन् १८९१ ई०)-को विक्रमादित्य-कालीन मूर्तियोंकी पुनः स्थापना करवायी तथा सीतारामजीकी दो नवीन मूर्तियोंकी प्राण-प्रतिष्ठा भी करवायी। इस प्रकार कनकभवनके गर्भगृहमें प्राचीन मूर्तियाँ एवं विक्रमादित्यकालीन मूर्तियाँ भी अवस्थित हैं। महारानी वृषभानुकुँवरिने इन मूर्तियोंके लिये ६ लाख रुपयेके स्वर्णाभूषण और जवाहरात भी कनकभवनको अर्पित कर दिये। महारानीने शेख कादर बख्शके निर्देशनमें कनकभवनके ऊपर अत्यन्त भावपूर्ण अष्टकुंजोंका निर्माण भी करवाया, जिसमें सेविकाओंके आठ अतिरमणीय चित्र बने हुए हैं।

कनकभवनमें विभिन्न अवसरोंपर उत्सवोंकी सुन्दर शृंखला आयोजित होती है। मंगला, वल्लभा, शृंगार, राजभोग, उत्थापन, संध्या और शयन-आरतियोंमें श्रीसीतारामकी विभिन्न झाँकियोंके भी मनोरम दर्शन होते हैं।

श्रीसीतारामका यह लीला-निकेतन तथा उन्हींका विग्रह-रूप यह कनकभवन हजारों वर्षोंसे लाखों-करोड़ों दर्शनार्थियोंका आनन्ददाता रहा है। यह कनकभवन हमारे परम पूज्य भगवान् श्रीसीतारामका पुनीत प्रतीक है, यह हमारे दीर्घकालीन इतिहास और परम्पराके क्षेत्रमें धर्म और संस्कृतिकी ऊँची पताका है। यह कनकभवन कोटि-कोटि हिन्दू-जनताका आराधना-स्थल है।

श्रीकनकभवन-बिहारीकी छबि-माधुरी

मुख	अरविंद	सो	प्रफुल्लित	कपोल	गोल,
मंद	मुसकान	पर	चंद	बलिहारी	है।
बड़े-बड़े	लोचन	रसीले	औ	कटीले	बड़े,
चंचल	चपल	चितवनि	मनहारी		है॥
'जयरामदेव'	रंग	बरषत	अंग	अंग,	
छबि	की	तरंग	लागै	प्रेमिन	को प्यारी है।
कनकभवन	के	बिहारी	सरकार	तेरी,	
माधुरी	समस्त	विश्वमंडल	सों	न्यारी	है॥

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

इसके सिवा, जिनके कान भगवान्‌के नाम, रूप, गुण, प्रभाव, लीला, तत्त्व, रहस्यकी बातोंको सुनते-सुनते अघाते नहीं, जिनके नेत्र केवल भगवान्‌के दर्शनोंके लिये ही चातक और चकोरकी भाँति लालायित रहते हैं, जिनकी वाणी प्रेमपूर्वक भगवान्‌के गुणोंका ही गान करती रहती है, जिनकी नासिका भगवान्‌के स्वरूप तथा भगवान्‌को अर्पण किये हुए पुष्प, चन्दन, माला, तुलसी, नैवेद्य आदिकी गन्धको लेकर मग्न होती रहती है, जिनकी जिह्वा भगवान्‌के अर्पण किये हुए प्रसादका ही आस्वादन करती है तथा जो नर-नारी भगवान्‌को अर्पण करके ही और भगवान्‌की प्रसन्नताके लिये ही भगवान्‌का प्रसाद समझकर वस्त्र और आभूषण धारण करते हैं, जो मनुष्य अपने शरीरसे ईश्वर, देवता और ब्राह्मणोंका तथा वर्ण, आश्रम, गुण, पद और अवस्थामें जो अपनेसे बड़े हों, उनका प्रेम और विनयपूर्वक आदर-सत्कार, सेवा, आज्ञापालन और नमस्कार करते हैं, जो एकमात्र भगवान्‌पर ही निर्भर रहकर हाथोंके द्वारा भगवान्‌की सेवा, पूजा श्रद्धा-प्रेमपूर्वक निष्कामभावसे करके मुग्ध होते हैं, जो भगवान्‌के लीलाविग्रहों और उनके भक्तोंके दर्शनार्थ ही चरणोंसे तीर्थोंमें जाते और



श्रद्धा-भक्तिपूर्वक उनमें स्नान करते हैं, जो भगवान्के नामका श्रद्धा-भक्तिपूर्वक जप करते हैं, जो शास्त्र-विधिके अनुसार नित्य दान, श्राद्ध, तर्पण, होम, बाह्यण-भोजन श्रद्धा-प्रेमपूर्वक करते हैं, जो माता, पिता, स्वामी, आचार्य आदि गुरुजनोंको भगवान्से भी बढ़कर समझते तथा उनकी सब प्रकारसे श्रद्धा, भक्ति और आदरपूर्वक सेवा, सत्कार और पूजा करते हैं—इस प्रकार जो केवल भगवान्में प्रेम होनेके लिये ही श्रद्धा-प्रेमपूर्वक भक्तिसंयुक्त उपर्युक्त आचरण करते हैं, उनके हृदयमें भगवान् विशेषरूपसे निवास करते हैं।

जिनके हृदयमें सम्पूर्ण दुर्गुणोंका अभाव होकर सद्गुण प्रतिष्ठित हो जाते हैं, उनके हृदयमें भगवान् विशेषरूपसे निवास करते हैं और वे शीघ्र ही परमात्माके निकट पहुँच जाते हैं।

जिनमें काम-क्रोध, लोभ-मोह, अहंकार-अभिमान, मद-मत्सर, दम्भ-दर्प, राग-द्वेष, छल-कपट, अशान्ति-क्षोभ, आलस्य-प्रमाद, भोगवासना और विक्षेप आदिका अत्यन्त अभाव हो गया है, जो सबके हेतुरहित प्रेमी, सबके हितमें रत, सुख-दुःख, निन्दा-स्तुति, मान-अपमान, जय-पराजय, लाभ-अलाभमें सम हैं, जिनके मनमें भगवान्के सिवा अन्य कोई आश्रय नहीं है, जो निरन्तर भगवान्के ही शरण हैं, जिन्हें भगवान् प्राणोंसे भी बढ़कर प्यारे हैं, जिनका भगवान्में ही अनन्य विशुद्ध प्रेम है, जो माता-पिता, भाई-बन्धु, मित्र, स्वामी, गुरु, धन, विद्या, प्राण—सर्वस्व एक भगवान्को ही मानते हैं, जो परनारीको माताके समान और पराये धनको विषके समान समझते हैं, जो दूसरोंके दुःखसे दुखी और दूसरोंके सुखसे ही सुखी रहते हैं, जो दूसरोंके अवगुणोंको नहीं देखते हैं, उनके गुणोंको ही ग्रहण करते हैं, जो गौ, ब्राह्मण और समस्त प्राणियोंके हितमें रत हैं, जो नीतिमें निपुण हैं, जो अपनेमें जो कुछ अच्छाई है, उसे भगवान्की कृपा समझते हैं और अपनेमें जो बुराई है, उसे अपने स्वभावका दोष मानते हैं, भगवान्के भक्तोंमें जिनका प्रेम है, जो जाति, पाँति, धन, घर, परिवार, धर्म, बड़ाई आदि सबमें आसक्तिका त्यागकर भगवान्को ही हृदय में धारण किये रहते हैं, जिनकी दृष्टिमें स्वर्ग, नरक और मोक्ष समान हैं, जो सर्वत्र भगवान्को ही देखते रहते हैं, जो मन, वाणी और शरीरसे भगवान्के ही सच्चे सेवक हैं और जो कभी कुछ भी नहीं चाहते, प्रत्युत जिनका

एकमात्र भगवान्में ही स्वाभाविक निष्काम प्रेम है, ऐसे मनुष्योंके हृदयमें भगवान् विशेषरूपसे निवास करते हैं।

यों तो भगवान् सब जगह समानभावसे व्यापक हैं ही, किंतु जिनके हृदयका भाव उपर्युक्त प्रकारसे उत्तमोत्तम सद्गुणों और भगवत्प्रेमसे युक्त है, उनके हृदयमें भगवान् विशेषरूपसे विराजमान हैं। गीतामें भगवान् कहते हैं—

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेषोऽस्ति न प्रियः।

ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम्॥

(९।२९)

‘मैं सब भूतोंमें समभावसे व्यापक हूँ, न कोई मेरा अप्रिय है; और न कोई प्रिय है; परंतु जो भक्त मुझको प्रेमसे भजते हैं, वे मुझमें हैं और मैं भी उनमें प्रत्यक्ष प्रकट हूँ।’

यद्यपि ब्रह्मासे लेकर स्तम्बपर्यन्त समस्त प्राणियोंमें भगवान् अन्तर्यामीरूपसे समभावसे व्याप्त हैं, इसलिये उनका सबमें समभाव है और समस्त चराचर प्राणी उनमें सदा स्थित हैं तथापि भगवान्का अपने भक्तोंको अपने हृदयमें विशेष रूपसे धारण करना और उनके हृदयमें स्वयं प्रत्यक्षरूपसे निवास करना भक्तोंकी अनन्य भक्तिके कारण ही होता है।

जैसे समभावसे सब जगह प्रकाश देनेवाला सूर्य दर्पण आदि स्वच्छ पदार्थोंमें प्रतिबिम्बित होता है, काष्ठादिमें नहीं होता तथापि उसमें विषमता नहीं है; वैसे ही भक्तोंके हृदयमें विशेषरूपसे विराजमान होनेपर भी भगवान्में विषमता नहीं है।

जिनका किसीसे भी द्वेष नहीं, सबपर हेतुरहित दया और प्रेम है, जो क्षमाशील हैं, अहंकार और ममताका जिनमें अत्यन्त अभाव है, जिन्होंने अपने मन, बुद्धि और इन्द्रियाँ वशमें करके भगवान्में ही लगा दिये हैं, जिनसे किसीको भी उद्वेग नहीं होता, जिनका हृदय इच्छा, भय, उद्वेग और आसक्तिका अत्यन्त अभाव होकर परम शुद्ध हो गया है, जो पक्षपातरहित और दक्ष हैं, जो संसारसे उदासीन और विरक्त हैं, जिनमें कर्मोंके कर्तापन और फलेच्छाका अत्यन्त अभाव है, हर्ष-शोकका भी जिनमें अत्यन्त अभाव है, जिनका वैरी-मित्रमें, शीत-उष्णमें, अनुकूलता-प्रतिकूलतामें और मिट्टी-स्वर्णमें समान भाव है, इसी प्रकार सम्पूर्ण प्राणी, पदार्थ, भाव, क्रिया और

जीवनकी प्रयोगशाला

(पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल, एम०ए०, बी०टी०)

मनुष्यको अपना जीवन एक प्रयोगशाला मानना चाहिये। इसमें उसे अनेक प्रकारके अनुभव होते हैं। इन अनुभवोंका कुछ मौलिक सिद्धान्तोंतक पहुँचनेमें उपयोग करना चाहिये। जो मनुष्य जीवनके अनुभवोंको तत्त्वदर्शनके लिये उपयोगमें नहीं लाता, वह बालबुद्धि है। संसारके अनुभव हमें कुछ स्थायी शिक्षा देते हैं। हमें उन अनुभवोंकी ओर दृष्टि न रखकर उस शिक्षाकी ओर दृष्टि रखनी चाहिये। संसारके सभी पुरुष सुख और दुःखका अनुभव करते हैं। इस तरह वे सारा जीवन बिना किसी प्रकारकी शिक्षा प्राप्त किये ही बिता देते हैं। अर्थात् वे मृत्युपर्यन्त बालक-जैसे ही बने रहते हैं। कितने ही मनुष्य उस समय जीवनके अनुभवोंके तथ्यको समझ पाते हैं, जब उनके जीवनका सार भाग निकल जाता है और वे उसका कुछ भी उपयोग नहीं कर पाते। जैसे जर्मनीके प्रसिद्ध तत्त्ववेत्ता शोपनहारने बताया है कि मनुष्यके अनुभव जबतक ज्ञानके रूपमें परिणत होते हैं, तबतक जीवनका सार भाग निकल जाता है। (When experience ripens to wisdom, the rind of life is gone.) अतएव जो व्यक्ति वृद्धावस्थाके पूर्व ही ज्ञानोन्मुख हो गया है, वह धन्य है।

जब मनुष्य अपने किसी प्रकारके अनुभवोंसे किसी सिद्धान्तपर पहुँचे तो उसे संसारके लाभके लिये सबके समक्ष रखना चाहिये। जिस मनुष्यकी यह बुद्धि है कि मेरे कष्टोंसे दूसरोंका लाभ हो, वह दुःखमें रहकर भी कदापि उद्विग्न न होगा। वास्तवमें यह जीवनका प्रथम और मौलिक सत्य है कि कोई भी व्यक्ति, जो अपने ही सुखकी चिन्ता करता है, कभी सुखी नहीं रह सकता। जैसा एक अंग्रेज लेखकने कहा है कि सच्चा सुख दूसरोंको सुखी बनानेसे ही प्राप्त किया जा सकता है। मनुष्यको अपने जीवनकी घटनाओंके प्रति सदा साक्षि-भाव रखना चाहिये। घटनाओंका किसी निश्चित प्रकार घटित होना मनुष्यके हाथमें नहीं है और जो मनुष्य बाह्य घटनाओंपर अपने सुखको निर्भर कर देता है, वह सदा ही दुखी रहता है। मनुष्यके हाथमें केवल इतना ही है

कि वह उन घटनाओंके प्रति अपना भाव कैसा रखे। अपने रखके अनुसार ही मनुष्य किसी घटनासे मानसिक क्लेश अथवा प्रसन्नता प्राप्त करता है और जो मनुष्य घटनाओंके प्रति पूर्णतः साक्षिभाव रखता है, वह सभी प्रकारकी घटनाओंमें शान्तचित्त रहता है।

कितने ही लोग अन्धे होकर धनके पीछे पड़ जाते हैं और कितने पद-लोलुपतामें अपनेको खो देते हैं। जब मनुष्य किसी प्रकारके व्यवसायमें लग जाता है, तब उसमें आत्म-निरीक्षणकी शक्ति नहीं रहती। इस प्रकार वह अनेक मानसिक कष्ट भोगता रहता है और उनसे मुक्त होनेमें असमर्थ रहता है। इस प्रकारका मनुष्य अपने मानसिक क्लेशोंका कारण अपनेमें न ढूँढ़कर बाह्य जगत्में ढूँढ़ता है। वह अपने दोषोंको खोजकर उनका निवारण करनेके बदले दूसरोंमें दोष ढूँढ़ता है, अपने मानसिक दुःखोंके लिये दूसरेको जिम्मेदार बनाता है; किंतु इस प्रकार उसके दुःखोंका नाश न होकर दिन-पर-दिन वृद्धि ही होती है। आधुनिक मनोविज्ञानने मनुष्योंकी इस प्रकारकी मनोवृत्तिका भलीभाँति अध्ययन किया है। इस प्रवृत्तिको आरोप (इनट्रोजेक्शन)-की प्रवृत्ति कहा है।

जब हमारा मन अधिक विक्षिप्त हो, हमें उस समय बाह्य जगत्की चिन्ता छोड़ देनी चाहिये और अपने ऊपर ही विचार करना चाहिये। संसारकी कोई भी परिस्थिति स्थायी नहीं है। 'यह भी न रहेगा'—इस विचारका अभ्यास करना उचित है। जब प्रत्येक परिस्थिति परिवर्तनशील है, तब उद्विग्न होना मूर्खता है। मनुष्य उद्विग्नतासे अपनी हानि ही करता है, उसे लाभ कुछ नहीं होता।

हालकी ही बात है कि लेखकका मन किसी प्रकारकी घटनाओंसे क्षुब्ध हो गया। इस प्रकारकी स्थिति कुछ कालतक रही। इस स्थितिमें न तो नींद ही ठीकसे आती और न स्वप्न ही अच्छे आते। इन्हीं दिनों अपने एक मित्रसे, जो बौद्ध भिक्षु हैं, मिलनेका संयोग हुआ। उनसे बौद्ध-धर्ममें प्रशंसित मैत्री-भावनापर बात

जिस समय हममें कोई दोष आ जाता है, उस दोषके परिणामोंसे हमें कोई बचा नहीं सकता; और यदि हममें सद्गुण हैं तो हमारी कीमत एक जगह नहीं, तो दूसरी जगह अवश्य होगी। कहीं-न-कहीं हमारी मौलिकता अवश्य पहचानी जायगी। मनुष्योंको दुःखोंसे भागना न चाहिये, उनका भोग करना चाहिये। कठिन परिस्थितियोंसे भागना उचित नहीं, उन्हें भोगना ही उचित है। कठिन परिस्थितियाँ पीछे सरल हो जाती हैं। दुःख देनेवाली घटनाएँ पीछे सुखका कारण बन जाती हैं। जो मनुष्य अपने जीवनका लक्ष्य परोपकार ही बना चुका है, उसे कौन परिस्थिति लक्ष्यभ्रष्ट कर सकती है? यदि कठिन परिस्थितिसे उसे लड़ना पड़ता है तो उससे संसारका कल्याण ही होता है। उसकी उन परिस्थितियोंपर विजय देखकर दूसरे लोगोंको अपने सामने आनेवाली परिस्थितियोंसे लड़नेमें प्रोत्साहन मिलता है। इसी प्रकार बड़े लोगोंकी जीवनी दूसरोंके लिये शिक्षाका साधन बन जाती है। जीवनको एक प्रयोगशाला मानना चाहिये। इसके बाह्य लाभ या हानिमें मनको न फँसाकर उससे ज्ञान प्राप्त करना चाहिये और उस ज्ञानका संसारके लोगोंमें वितरण करना चाहिये। इसी तरह हम सखी रह सकते हैं।

जगतका स्वरूप

श्रीनारदजी तथा श्रीअंगिराजी अपनी राह जा रहे थे। बकरेकी उपर्युक्त घटना देखकर नारदजीको हँसी आ गयी। अंगिराजीने इस हँसीका रहस्य पूछा। तब नारदजीने बताया कि यह अनाजकी दूकान पहले बहुत छोटी थी। इसके मालिकने इसी दूकानसे अपने व्यापारकी प्रतिष्ठा की। वह अन्तमें करोड़पति हो गया। उसीने यह इतनी बड़ी इमारत बनवायी। वह बहुत बड़े-बड़े व्यापार करने लगा; परंतु अनाजकी बुनियादी दूकानको अपने रहनेके मकानके नीचे ही रखा; क्योंकि इसी दूकानसे उसकी क्रमशः उन्नति हुई थी। मालिक मर गया। उसका बेटा उत्तराधिकारी हुआ। वही तरुण दूकानपर बैठा है, जिसने बकरेको छड़ीसे मारकर भगाया है। यह इस दूकानपर रोज घंटेभर आकर बैठता है। काम-काज तो नौकर करते हैं। मुझे हँसी इस बातपर आ गयी कि दूकानका वह मालिक—इस तरुणका पिता ही बकरेकी योनिमें पैदा हुआ है। यही एक दिन इस दूकानका, मकानका और सारे कारोबारका मालिक था; पर आज एक मुट्ठी अनाजपर भी उसका अधिकार नहीं है। अनाजकी ओर मुँह करते ही मार पड़ती है और जिस पुत्रको बड़े प्यारसे पाला-पोसा, वही मारता है। यही है जगत्का स्वरूप।

शक्ति है, वह अपनी शक्तिके अनुसार ही सेवा करे। सेवा करके कभी अभिमान न करे और न यह समझे कि मैंने जिनकी सेवा की है, उनपर कोई कृपा की है, वे मुझसे नीचे हैं, मैंने उनका उपकार किया है, उनको मेरा कृतज्ञ होना चाहिये या अहसान मानना चाहिये; बल्कि यह समझे कि 'सेवाका सौभाग्य और बल प्रदान करके भगवान् ने मुझपर बड़ी कृपा की, मेरे द्वारा किसीको कुछ सुख मिला है; इसमें उनका भाग्य ही कारण है; उसीके लिये वह वस्तु आयी है और भगवान् ने मेरे द्वारा उसे वह चीज दिलवायी है; मेरा अपना कुछ भी नहीं है; मैं तो निमित्तमात्र हूँ। मेरे अभिमान करनेका कोई भी कारण नहीं है।'।

बात भी यही है। हमारे पास विद्या, बुद्धि, तन, मन, धन, जो कुछ है, वह सब भगवान्‌की धरोहर है, उनकी चीज है। उनको जहाँ जिस वस्तुकी आवश्यकता हो, वहाँ उस वस्तुको आदरपूर्वक प्रसन्न मनसे उनके समर्पण कर देना ही हमारा धर्म है। जहाँ अकाल है, वहाँ वे अन्न माँगते हैं; जहाँ सूखा है, वहाँ जल चाहते हैं; जहाँ बाढ़में सब कुछ बह गया, वहाँ वे अन्न-वस्त्र और आश्रय चाहते हैं। ऐसी अवस्थामें हमारे पास उनका जो कुछ भी हो, तुरंत देकर उनकी प्रसन्नता प्राप्त करनी चाहिये। उन्हींकी चीजसे उनकी पूजा करनी चाहिये। इस प्रकार जो भगवान्‌की पूजाके भावसे दुखी जीवोंकी सेवा करता है, उसे मुनिजनदुर्लभ साक्षात् भगवान्‌की या भगवान्‌के प्रेमकी प्राप्ति होती है और बुद्धिमानोंको इसी भावसे सेवा करनी चाहिये। जो अपनी क्रियाका ऊँचा-से-ऊँचा फल प्राप्त कर सके, वही बुद्धिमान् है।

यहाँपर एक प्रश्न होता है कि तब क्या संसारमें दैवी संकटोंका आना किसी प्रकार रुक नहीं सकता? इसका उत्तर यह है कि जबतक संसार है, तबतक इनका सर्वथा नष्ट होना तो असम्भव है, परंतु ये कम अवश्य हो सकते हैं। जिस कालमें दैवी संकट

कम होते हैं, इसीको सत्ययुग कहते हैं, और उसके शान्ति एवं सुखवस्था फैलेगी।

कारण हैं—‘व्यष्टि विश्वके कर्म।’ महर्षियोंने कहा है कि ‘जब देश, नगर और ग्रामोंके शासक तथा उनकी देखा-देखी प्रजाजन अधर्ममें रत हो जाते हैं; काम, क्रोध, लोभ और अभिमानके वश होकर असत्य, हिंसा, चोरी, व्यभिचार, शिष्टोंका अपमान और शास्त्रकी अवहेलना करने लगते हैं, तब देवता उनकी रक्षा न करके उन्हें त्याग देते हैं। इसीसे ठीक समयपर वर्षा नहीं होती, होती है तो कहीं अनावृष्टि और कहीं अतिवृष्टि। वायु ठीक नहीं बहती। भूमि विकारयुक्त हो जाती है। जल सूख जाता है। ओषधियाँ अपना स्वभाव छोड़ देती हैं। लोभ और क्रोधकी वृद्धिके कारण परस्पर भयानक युद्ध छिड़ जाते हैं। लोगोंकी आजीविका नष्ट हो जाती है। भूकम्प, वज्रपात और जलप्रलय आरम्भ हो जाते हैं। धर्मविहीन मनुष्य धर्मभ्रष्ट होकर गुरु, वृद्ध, सिद्ध, ऋषि और पूज्योंका अपमान करके अहित-साधन करते हैं और अन्तमें उन गुरुओंके अभिशापसे भस्म हो जाते हैं।’ सच पूछिये तो आजकल यही हो रहा है। ऐसे संकटसे बचनेके लिये शास्त्रोंमें जो उपाय बतलाये गये हैं, उनका साररूप निम्नलिखित दस बातें हैं—

- १-सत्यका पालन।
 - २-दुखी प्राणियोंपर दया।
 - ३-तन, मन, धनसे सात्त्विक दान।
 - ४-देवताओंकी यथाविधि पूजा।
 - ५-सदाचरण।
 - ६-ब्रह्मचर्यपालन।
 - ७-शास्त्र और जितात्मा महर्षियोंकी आज्ञाका पालन।
 - ८- धर्मात्मा और सात्त्विक पुरुषोंका संग।
 - ९- गो-सेवा, गायोंके लिये गोचरभूमिकी व्यवस्था।
 - १०- भगवान्के नामरूपी मन्त्रोंके द्वारा आत्मरक्षा।
 - ११- सबकी भलाईकी भावना करना।
- इन बातोंके पालनसे विश्वसंकट टलेगा और सर्वत्र

ही प्रकाशमात्र है। सूर्य भी उस सूर्यके ही प्रकाशसे दीखता है। सुतरां सभी सूर्य हैं। इसलिये हम कोई भी अलग नहीं हैं, सबके साथ एक अखण्ड-योगसे युक्त हैं। प्रत्येक घड़ेमें जो अलग-अलग सूर्य दीखते हैं, सो उसी एक सूर्यके प्रतिबिम्ब हैं। अनेक देखकर भ्रम होता है, परंतु वास्तवमें वे सभी अनन्त प्रतिबिम्ब उस एक ही सूर्यके हैं! अँधेरेमें मुँह पहचाना नहीं जाता, अपने-परायेका निश्चय नहीं होता। अज्ञानान्धकारसे हमारी भी वही दशा हो गयी है। परंतु आज इस विकसित हुए आत्माके प्रकाशसे किसीको पहचाननेमें कोई कष्ट नहीं होता। आज इस चेतनके प्रकाशसे जगत्के सारे पदार्थ आनन्द-रसमें मतवाले हुए डगमगा रहे हैं—मालूम होता है सबमें आनन्द भरा है। इसीलिये जिसकी ओर दृष्टि जाती है, उसीमेंसे चिदानन्दमय आत्माका स्वरूप फूट निकलता है। कैसा सुन्दर है! कैसा अनुप है! जन्ममें जैसी सुन्दरता है, मृत्युमें भी वैसी ही सुन्दरता है। मुखकी हँसीमें उसका जैसा मनोहर सौन्दर्य है, दुःखकी अश्रुधारा में भी उसकी वही अनोखी रूपमाधुरी है। अतएव किसीको देखें या न देखें, पहचानें या न पहचानें, हैं हम सभी एक; सभी अन्तरात्माओंका मिलनक्षेत्र है, एक अखण्ड अद्वितीय परमात्मा। जो तरंगें तटपर आघात कर रही हैं, वह क्या महासमुद्रसे पृथक् हैं? प्रत्यक् और परम वह एक ही वस्तु है। इसीसे प्रत्येक प्राणमें मिलनकी इतनी आकांक्षा है। सब प्राण उसी एक महाप्राण समुद्रके तरंगोच्छ्वास हैं। इसीसे हम सबके साथ समान भावसे सुख-दुःख और संयोग-वियोगका अनुभव किया करते हैं। इसीसे संकुचित 'अहं' ज्ञान नष्ट होने लगता है। फिर सर्वत्र ही उसका स्पर्श पाकर शरीर रोमांचित हो उठता है, प्राण प्रफुल्लित हो उठते हैं। हे मेरे श्यामसुन्दर! हे मेरे हृदय-सखा! हे जीवके सर्वस्व धन! आज यह क्या देख रहा हूँ? आज यह करोड़ों विभिन्न वस्तुएँ, करोड़ों नर-नारी सभी मानो एक ही प्रतीत हो रहे हैं! इनमें कोई भी दूसरा नहीं है, कोई भी मेरी आत्मासे भिन्न नहीं है। तुमने अपने

‘जिस परमेश्वरसे सम्पूर्ण प्राणियोंकी उत्पत्ति हुई है

शास्त्रीय एवं तत्त्वदृष्टिसे देखा जाय तो सब कुछ पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाशादि पंचतत्त्वोंसे निर्मित है।

श्रीसूरदासजीका होली-वर्णन

(पं० श्रीशिवनाथजी दुबे)

षट् ऋतुओंमें वसन्तको 'ऋतुराज' की उपाधि प्राप्त है। वसन्तके कोमल करस्पर्शमात्रसे ही वसुन्धरा मुदित हो जाती है। सर्वत्र आनन्द एवं मस्ती थिरकने लगती है। प्रकृति-नटी बन-ठनकर अत्यन्त लावण्यवतीके रूपमें दर्शन देती है। वृक्ष अपने पुराने पत्तोंको छोड़कर नूतन एवं कोमल पत्ते धारण कर लेते हैं। सरोवरमें कमल एवं धरतीपर पलास खिल जाते हैं। आम्र-मंजरियोंकी मादक गन्ध दिक्-दिगन्तमें व्याप्त हो जाती है। मत्त भ्रमरकुल मधुपानके लिये गुंजार करता हुआ विकसित कलिकाओंकी ओर चल देता है। अमराइयोंमें कोयल मधुर ध्वनिमें कूकने लगती है। वासन्ती पवन मदमत्तकी भाँति डोलता हुआ सर्वत्र उन्मद संदेश सुनाने लगता है। सर्वत्र मदमस्तीका प्रभाव व्याप्त हो जाता है। वसन्तके इस मोहक स्वरूपपर किस पुरुषका हृदय अर्पित नहीं हो जायगा। सरिता-सरोवरोंके निर्मल नीरमें अरुण, नीले एवं उज्ज्वल विकसित कमलोंको देखकर, वनोंमें पुष्पोंसे लदी लता-वल्लरियोंपर दृष्टि डालकर, आम्रमौरोंकी भीनी सुगन्ध पाकर, भ्रमरोंकी गुंजार एवं कुंजोंकी ओरसे आती हुई पंचमकी धुन सुनकर कौन नहीं छक जायगा, कौन नहीं बिक जायगा ? और इसी कारण संस्कृतके कवियोंने वसन्त-वर्णनमें अपनी लेखनीके अद्भुत कौशलका परिचय दिया है। यहाँ हम महाकवि कालिदासका एक श्लोक उद्धृत करते हैं। वसन्तका प्रभाव देखिये—

द्रुमाः सपुष्पाः सलिलं सपदमं

स्त्रियः सकामाः पवनः सुगन्धिः।

सुखाः प्रदोषा दिवसाश्च रम्याः

सर्वं प्रियं चारुतरं वसन्ते॥

'वसन्तमें सब कुछ सुहावना हो गया है। वृक्षोंमें फूल खिल आये हैं, जलमें कमल खिल गये हैं, स्त्रियोंमें काम जग उठा है, पवन सुगन्धसे भर गया है, सन्ध्या सुहावनी हो उठी है और दिन लुभावने हो गये हैं।'

इसी प्रकार महाकवि भारवि, महाकवि माघ, भोजदेव, पीयूषवर्षी जयदेव, पण्डितराज जगन्नाथ आदि संस्कृतके महाविद्वानोंद्वारा वर्णित वसन्त-वर्णन पढ़-सुनकर मन मुग्ध हो जाता है। हिन्दी-साहित्यके कवियोंने भी इसके यशोगानमें अपनी विलक्षण प्रतिभाका भरपूर उपयोग किया है। संत कवि भी अपने आराध्यकी लीलाओंके स्मरणके मिससे वसन्तका पर्याप्त गुणगान करनेमें किसीसे पीछे नहीं रहे हैं। संत नन्ददासका वर्णन देखिये—

लहकनि लागी बसंत-बहार सखि, त्यों-त्यों बनवारी लाग्यौ बहकनि।
फूले पलास नख नाहर-कैसे, तैसौइ कानन लाग्यौ री महकनि॥
कोकिल, मोर, सुक, सारस, खंजन, भ्रमर देखि, आँखियाँ लगीं ललकनि॥

श्रीगोविन्दस्वामी अनुपम वसन्तका कीर्तिगान इस प्रकार करते हैं—

आयौ बसंत रितु अनूप कंत आम्र मौरे।

बोलत बन कोकिला मानों कुहू-कुहू रस ढोरे॥

फूली बनराजि जाइ कुंद-कुसुम थोरे।

मधु-राते, मधु-माते मधुप फिरत दौरे॥

हम-तुम मिलि देखैं लाल निकुंज-भवन द्वारें।

'गोविंद' प्रभु नंद-सुवन खेलत इक ठौरें॥

इन संतोंने वसन्तमें श्रीहरि-लीलाके कितने ही सुललित पदोंकी रचना की है, जिनको पढ़ते ही मन मुग्ध एवं तन्मय हो जाता है। वे रचनाएँ हिन्दीसाहित्यकी अनमोल निधि तो हैं ही, भक्तोंकी प्राणप्रिय सम्पत्ति हैं। इन संत कवियोंमें भक्तप्रवर श्रीसूरदासजीका अत्यन्त आदरणीय स्थान है। हिन्दी कविकुलमें संत सूर 'सूर्य' की उपाधिसे विभूषित हैं। इनके अनूठे पदोंके कितने ही संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। श्रीसूरदासजीका वसन्त-वर्णन देखिये—

कोकिल बोली, बन-बन फूले, मधुप गुंजारन लागे।
सुनि भयौ भोर, रोर बंदिन कौ, मदन-महीपति जागे॥



निकसि कुँवर खेलन चले, रँग होरी।
 मोहन नंद-किसोर, लाल रँग होरी॥
 कंचन माँट भराइ के, रँग होरी।
 सोधैं भर्यो कमोर, लाल रँग होरी॥
 झाँझ-ताल सुर-मंडले, रँग होरी।
 बाजत मधुर मृदंग, लाल रँग होरी॥
 तिन मैं परम सुहावनी, रँग होरी।
 महुवरि, बाँसुरि, चंग, लाल रँग होरी॥

होलीके एक नहीं, सैकड़ों पद एक-से-एक सुन्दर एवं प्रभावोत्पादक महाकविके रचे हुए हैं। उन्हें बार-बार पढ़नेकी इच्छा होती है। कविवरेण्यने होली-वर्णनमें प्रेमकी मंजुल मूर्ति गोपियों एवं आनन्दकन्द श्रीकृष्णकी प्रेमलीलाओंका खूब सरस एवं हृदयग्राही वर्णन किया है। यहाँ हम ऐसी मधुर लीलाका उल्लेख करते हैं—

कालिन्दी-कूलपर यशोदानन्दन श्रीकृष्ण कुंजोंमें होली खेल रहे हैं। एक ओर तो श्रीकृष्ण अपने सखाओं गोप बालकोंके साथ हैं और दूसरी ओर वृषभानुकुमारी श्रीराधा अपनी सखियोंके साथ आयी हुई हैं। होलीकी प्रतिद्वन्द्वितामें वे परस्पर स्नेहसिक्त गाली देते हैं और हाथोंमें स्वर्णकी पिचकारी लेकर एक-दूसरेपर केसर-मिश्रित रंग डालते हैं, अबीर-गुलाल उड़ाते हैं।

होरी खेलत जमुना के तट, कुंजनि तर बनवारी।
 इत सखियन कौ मंडल जोरें, श्रीवृषभानु-दुलारी॥
 होड़ा-होड़ी होत परस्पर, देत हैं आनंद-गारी।
 भरे गुलाल कुमकुमा केसर, कर कंचन-पिचकारी॥
 वहाँ वीणा, महुवर, किन्नरी, मुरचंग तथा बाँसुरी बज रही है। झाँझ, मृदंग और ढफके स्वरोंकी तरंगें उठ रही हैं। गोप बालक एवं श्रीकिशोरीजीकी सखियाँ सभी एक-दूसरेपर केसर और रंग छोड़ते हैं तथा स्वयं हँसते और दूसरोंको भी हँसाते हैं।

इसी समय चतुर श्रीकृष्णने अपने सखाओंको बुलाकर कहा—‘भाइयो, होलीके रंग एवं विनोदमें भी सजग रहना कोई गोपियोंके हाथ न आ जाय, अन्यथा यदि गोपियाँ किसीको पकड़ लेंगी तो मनमानी दुर्गति कर

डालेंगी।’
 रे भैया! तुम चौकस रहियो, जिनि कोउ होहु गहायौ।
 जो काहू कौ पकरि पाइहैं, करिहैं मन कौ भायौ॥
 तातें सावधान हैं रहियौ, मैं तुमकों समझायौ॥
 श्रीकिशोरीजी भी कम चतुर नहीं थीं। उन्होंने भी अपनी एक सखीको बुलाकर उसे दाऊजीके वेषमें सजा दिया।
 राधा गोरी नवल किसोरी, इनहुँ मतो जु कीन्हो।
 सखि इक बोलि लई अपनैं ढिग, भेष जु बल को कीन्हो॥

सखी बलरामके वेषमें श्रीकृष्णकी ओर गयी। श्रीकृष्ण उससे मिलने चले। कोई भी गोपबालक सखीको पहचान नहीं सका। उसने श्यामसुन्दरको अपनी बातोंमें जरा-सा उलझाकर पीछेसे उन्हें पकड़ लिया। फिर क्या था, श्यामसुन्दरके पकड़में आते ही सारी गोपियाँ वहाँ एकत्र हो गयीं। वे कहने लगीं कि ‘हम विधातासे यही याचना कर रही थीं कि श्यामसुन्दरसे अपना दाँव कब पायेंगी। जब तुमने हमलोगोंके वस्त्रोंकी चोरी की, तब हम आकुल होकर रह गयी थीं। अब हम तुम्हारे वस्त्र छीन लेंगी और तुम छटपटाओगे।’ सूरदासजीके शब्दोंमें—

ताकाँ मिलन चले उठि मोहन, काहुँ सखा न चीन्हौ।
 नैंसुक बात बलाइ साँवरै पाछे तैं गहि लीन्हौ॥
 आई सिमिटि सकल ब्रज-सुंदरि, मोहन पकरे जबहीं।
 हम माँगत हीं यह बिधिना पै, दाँव पाइहैं कबहीं॥
 तब तुम चीर हरे जु हमारे, हा-हा खाई सबहीं।
 अब हम बसन छीनि करि लैहैं, हा-हा करिहौ अबहीं॥

एक सखी कहती है—‘इनके मुखारविन्दके लिये मेरी आँखें भ्रमरी हैं। जरा इनका मुखारविन्द उठाओ। मैं इन्हें देखकर अपनी तृषा शान्त कर लूँ।’

एक सखी कहती है—‘इनकी आँखोंमें अंजन एवं माथेपर बेंदी लगा दें।’ एक कहती है—‘इन्हें नचाया जाय और हम सब ताल दें।’

एक सखी पीछसे आयी और उनके मयूरपिच्छपर हाथ साफ कर दिया और एक सखीने अचानक आकर उनका पीताम्बर छीन लिया।

मैं तुम्हारे अंग-संग हूँ

एक नई भोरके आगमनके साथ, आज जब तुम उठे, तो मैंने तुम्हें देखा। सोचा कि तुम अपने दिनकी शुरुआत करनेसे पहले मेरा आशीर्वाद लेना जरूरी समझोगे। भले ही चुप रहोगे, पर मुझे प्रणाम जरूर करोगे। पर तुम तो पहननेके लिए सही कपड़े ढूँढ़नेमें व्यस्त थे और इधर-उधर भागकर कामपर जानेके लिये तैयार हो रहे थे।

तुम नाश्ता करने बैठे। मुझे लगा, अब तुम मुझसे भी दो निवाले खानेको कहोगे, पर तुम इतनी जल्दीमें थे कि यह भूल ही गये कि तुम्हारे द्वारा प्यारसे खिलाया गया एक निवाला ही मेरी भूख मिटा सकता है। फिर भी, तुम्हें जी भरकर खाता देख मैं अपनी भूख भी भूल गया। खानेके पश्चात् तुम्हारे पास १५ मिनटका समय था। तुम खाली बैठे मन-ही-मन कुछ सोचते रहे। मैंने सोचा कि अब तुम मुझसे बात करनेके लिये हिचकिचा रहे हो कि कहीं मैं तुमसे नाराज तो नहीं। नादान समझ मैंने तुम्हारी तरफ अपना पहला कदम बढ़ाया ही था कि तुम अपने फोनकी तरफ भागे, अपने मित्रसे ताजी खबर लेनेके लिये। मेरी आशा एक बार फिर टूट गयी, परंतु तुम्हें हँसता देख मैं भी मुसकरा दिया। तुम घरसे निकलने लगे। मेरा विश्वास था कि अब तो तुम जानेसे पहले मुझे प्रणाम करना नहीं भूलोगे। पर मेरा विश्वास तब टूटा जब मैंने देखा कि तुम्हें शीशेमें अपना चेहरा देखना तो याद था, पर मेरी आँखोंमें अपने लिये स्नेह नहीं। तुमने जरूरत तो न समझी, पर फिर भी मैंने तुम्हें अपना आशीर्वाद दिया। वह आशीर्वाद जो कभी हर परीक्षामें तुम्हारे लिए अमूल्य था, पर दुनियाकी भाग-दौड़ने तुम्हें इसका मूल्य भुलवा दिया है।

तुम घरसे निकले, यह सोचकर कि तुम अकेले हो, पर तुम्हें अपने कदमोंके साथ मेरे कदमोंकी आहट सुनाई ही नहीं दी। पूरा समय तुम अपने कार्योंमें तथा मित्रोंके बीच व्यस्त थे और मैं पहलेकी तरह तुम्हें एकटक देख रहा था। दोपहर हुई और मैंने देखा कि भोजन करनेसे पहले तुम इधर-उधर नजरें घुमा रहे थे। संकोचसे भरी तुम्हारी आँखें क्या मुझे याद करनेसे रोक रही थीं? और संकोच भी किससे? मित्रजनसे, दुनियासे, या फिर अपने आपसे?

समयका पहिया यूँ ही चलता रहा और मेरे इन्तजारके क्षण यूँ ही बीतते रहे। इसी प्रकार शाम हो गयी और तुम

लौट आये। एक बार फिर मैंने अपनी आशाके दीप जलाये, यह सोचकर कि अपने कार्योंको समाप्त करनेके बाद अब तो तुम मुझसे बात करना चाहोगे। पर यह क्या? तुम तो टी०वी० देखने बैठ गये। तुम उसमें कुछ देखना तो नहीं चाहते थे, पर न जाने किस विवशतासे उसके सामने बैठे रहे और चैनल बदलते रहे। मैं समझ चुका था, कि कोई बात तुम्हें अन्दर-ही-अन्दर खा रही है। तुम्हारे मनकी मंशाको मैंने तुम्हारी आँखोंमें पढ़ लिया था। मुझे लगा, कि अब तुम मुझसे राय लेनेके लिये मेरे पास आओगे। तुम्हें यह तो याद होगा कि हर मुश्किल घड़ीमें मैंने तुम्हारा साथ दिया है। पर अब शायद तुम्हें मेरी सहायताकी जरूरत नहीं है। इसलिये तुम अपने मनके तूफानको मनमें दबाये हुए, सोनेके लिये बिस्तरपर लेट गये। तुम कुछ सोचने लगे। तुम्हारी आँखोंमें न तो नींद थी, न ही चैन। तुम्हारी यह बेचैनी जब मुझसे देखी न गयी, तो मैं तुम्हारी तरफ बढ़ा। अपना हाथ तुम्हारे सरपर रख, मन-ही-मन सोचा, कि अब तुम आँखें खोलोगे और यह देखोगे कि मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूँ। पर तुम तो सो चुके थे और इसीके साथ मेरा इन्तजार अधूरा रह गया।

लेकिन आज अगर मेरी आशाका दीप बुझ गया तो क्या हुआ? कल ये दीप मैं फिर जलाऊँगा। तुम मेरी संतान हो, मेरा ही अंश हो। मैं तुम्हें बहुत प्यार करता हूँ। तुम्हें पानेके लिये मेरे मनमें जो चाहत और धीरज है, उसकी तुम कल्पना भी नहीं कर सकते। यह जरूरी नहीं कि तुम किसी विवशतापूर्वक मेरा ध्यान करो।

मैं तुम्हारे मुखसे अपने लिये अपार प्रशंसा नहीं, बल्कि प्यारके दो बोल सुनना चाहता हूँ। मैं तुम्हारी आँखोंमें दुनियासे संकोच नहीं बल्कि अपने लिये स्नेह देखना चाहता हूँ और हाँ, मैं तुम्हारी प्रार्थनाओंमें डर और इच्छाएँ नहीं, बल्कि आदर और स्नेह देखना चाहता हूँ। तुम्हारा भय, तुम्हारी इच्छाएँ, तुम्हारा दुःख—सब मेरे होंगे, और मैं तुम्हारा।

कल फिर तुम नींदसे उठोगे, एक नयी भोरके साथ और मैं फिर तुम्हारा स्नेहपूर्वक इन्तजार करूँगा, एक बार फिर अपनी आशाका दीप जलाये, यह सोचकर कि कभी तो तुम्हें मेरी उपस्थितिका एहसास होगा।

—तुम्हारा साथी भगवान्। [प्रेषक-श्रीएम० के० रायजी]

संत श्रीदेवराहा बाबाके वचनामृत

(वैकुण्ठवासी श्री श्री १००८ श्रीगोकुलदासजीद्वारा संकलित)

❖ मनको निर्विषय करना ध्यान है, मनके विकारोंको त्यागना स्नान है।

❀ जितना सत्संग करें, उससे द्वागुना मनन करें।

❖ प्रतिदिन यथासाध्य कुछ-न-कुछ दान अवश्य करो, इससे त्यागकी प्रवृत्ति जागेगी।

❖ संसार सरायकी तरह है, हमारा अपना स्थायी आवास तो प्रभुका धाम है।

❖ खूब जोर-जोरसे भगवन्नामका उच्चारण करो।
ऊँचे स्वरमें भजन करनेसे मन संकल्प-विकल्पसे मुक्त
हो जाता है।

❖ सत्य ईश्वरका स्वरूप है और असत्यके बराबर कोई पाप नहीं है।

❖ भक्ति चरमावस्थापर तब पहुँचती है, जब भक्तके लिये भगवान् व्याकुल होते हैं।

❖ सम्पत्ति पाकर भी जिनमें उदारतापूर्वक दानकी या सेवाकी भावना नहीं आती, वे भाग्यहीन हैं।

❖ इस भावका बराबर स्मरण रखना चाहिये कि संसार हमसे प्रतिदिन छूट रहा है।

❀ कलियुगमें पाप नहीं करना ही महान् पुण्य है ।

❁ संसारमें कितना सुख-भाग तुम्हें प्राप्त होगा,
यह ईश्वरने पहले ही सुनिश्चित कर दिया है।

❖ जो व्यक्ति वाणीका, मनका, तृष्णाका वेग सहन कर लेता है, वह महामुनि है।

❖ वाणीको मधुर और विवेकसम्मत बनानेके लिये क्रोधपर विजय प्राप्त करो।

❁ देवता, गुरु, मन्त्र, तीर्थ, औषधि और महात्मा
श्रद्धासे फल देते हैं, तर्कसे नहीं।

❀ मनका शान्त रहना ही योगका लक्षण है।

❁ पर-दोष-दर्शन भगवत्प्राप्तिमें बड़ा विघ्न है।

❖ मानव जीवनका परम लक्ष्य केवल दुःख-सुख भोगना नहीं है, अपितु उनके बन्धनसे मुक्त होना है।

❖ भक्ति सुधाकी तरह है, जितना पियोगे उसी अनपातमें और पीनेकी इच्छा होगी।

❁ ध्यानके बिना ईश्वरकी अनुभूति नहीं होती।

❁ स्नान करनेसे तनकी शुद्धि, दान करनेसे धनकी शुद्धि और ध्यान करनेसे मनकी शुद्धि होती है।

❖ जगत्के किसी भी पदार्थसे इतना स्नेह न करो कि वह प्रभु-भक्तिमें बाधक बन जाय।

❖ अपने बलको मनुष्य जब भगवान्‌के बलसे अलग मानता है तो वह बल आसुरी हो जाता है।

❖ मानसिक पापोंका भी परित्याग करो। मनमें जमी हुई जीर्ण वासना भी दुष्कर्म कराती है।

❖ भूखोंको रोटी देनेमें और दुखियोंके आँसू पोंछनेमें जितना पुण्य-लाभ होता है, उतना वर्षोंके जप-तपसे नहीं होता है।

❖ संसारमें रहनेसे नहीं, मनको संसारमें लगानेसे पतन होता है।

❀ संसारमें रहो, पर अपनेमें संसारको मत रखो ।

❖ उपदेश-श्रवणके समय मन सत्त्वगुणमें रहता है, परंतु बादमें चंचल हो जाता है। एकान्तमें उपदेशोंपर चिन्तन-मनन आवश्यक है।

❁ ईश्वर गुप्त है, अतः उसकी प्राप्तिके लिये जो भी साधना करो, वह गुप्त रखो।

❖ मनुष्य संकटके समय ईश्वरकी तथा अन्यान्य जीवोंकी दयाका पात्र होता है।

❖ भक्ति तीन प्रकारकी होती है। पहली जो पत्थरके समान डूब जाती है और बाहरसे गलीली हो जाती है, किंतु भीतरसे सूखी रहती है। दूसरी जो कपड़ेके समान सब तरफसे गलीली हो जाती है, फिर भी पानीसे अलग रहती है। तीसरी जो शक्करके समान पानीके साथ घुलकर एक हो जाती है। यही भक्ति श्रेष्ठ है। भक्तिके सात सोपानोंकी चर्चा करते हुए तुलसीने लिखा है—*‘एहि महँ रुचिर सप्त सोपाना। द्युपति भगति केर पंथाना।’*

❀ सच्चे अकाम भक्तकी यही पहचान है कि वह परम विश्वासके साथ एक बार भगवान्‌के सामने अपनी बात रखकर चुपचाप भगवान्‌का निर्भय भजन करता रहता है। [प्रेषक—श्रीलालनप्रसादजी सिन्हा]

(श्रीसत्यप्रकाशजी किरण)

उस पथपर अपने संगियोंमें उसे मिली नारी। पथिककी प्रसन्नताका पारावार न रहा। उसे नारीमें मिला मादक सौन्दर्य, मिली वासनाकी कोमल और मार्मिक चोटें। पथिकने बड़ी खुशीसे अपने ऊपर चोटें लगने दीं। पथिकको यह पथ बड़ा ही चिकना, सुन्दर, सुखकर और सहज दीखा। नारीने उसे सौन्दर्यकी छलकती प्यालीमें वासनाकी मादक मदिरा भर-भरकर पिलाना आरम्भ किया और पथिक खूब छककर पीने लगा। वह अब खूब पीता, चलता तब पीता, रुकता तब पीता, और वह रसीली नारी उसे पिलाये ही जाती। नारीकी वृत्ति, प्रवृत्ति, कृति, प्रकृति—सभी गुणोंने उसे मुग्ध कर लिया था। पथिककी आँखें मदसे मतवाली होकर जैसे चेतना खोने लगीं। अब नारी उसके आगे-आगे चलती और उसके चलनेसे पायलकी जो झनकार होती, उसीका अनुसरण पथिक करता जाता था। इस तरह चलते-चलते एक दिन नारी एक खंदकके ऊपर रुकी। उसके रुकते ही पथिक भी रुक गया। इस समय उसपर नशेका पूरा प्रभाव था। उसकी आँखें मुँदी हुई थीं, पैर लड़खड़ा रहे

पथिक अब भी उसी तरह पड़ा था।

एक लकड़हारा था। वह जंगलसे लकड़ियाँ काटकर लाता और उन्हें बेचकर बड़े ही कष्टपूर्वक अपना जीवन-यापन करता था। अकस्मात् उस मार्गसे जहाँ वह लकड़ी काट रहा था, एक संन्यासी निकले। उन्होंने लकड़हारेके दुःखको देखकर उससे कहा—‘बेटा! जंगलमें और आगे बढ़ो, तुम्हें लाभ मिलनेवाला है।’ लकड़हारा आगे बढ़ा, तब उसे एक चन्दनका वृक्ष मिला। उसने उस वृक्षसे बहुत-सी लकड़ियाँ काट लीं और उसे ले जाकर बाजारमें बेचा। इससे उसको बहुत लाभ हुआ। उसने सोचा—‘संन्यासीने चन्दनके वृक्षका नाम क्यों नहीं लिया? इतना ही क्यों कहा कि और आगे बढ़ो।’ दूसरे दिन वह जंगलमें और आगे बढ़ा, तब उसे ताँबेकी एक खान मिली। उसने उसमेंसे मनमाना ताँबा निकाला और बाजारमें बेचकर रुपया प्राप्त किया। तीसरे दिन वह और आगे बढ़ा, उस दिन उसे एक चाँदीकी खान मिली। उसने उसमेंसे मनमानी चाँदी निकाली और बाजारमें बेचकर और अधिक रुपया प्राप्त किया। चौथे दिन वह और आगे बढ़ा, वहाँ उसे सोने और हीरेकी खानें मिलीं। अन्तमें वह बड़ा धनवान् हो गया। इसी प्रकार वे लोग, जिन्हें ज्ञान प्राप्त करनेकी अभिलाषा होती है, थोड़ी-सी सिद्धि प्राप्त करनेपर रुकते नहीं, बराबर बढ़ते ही जाते हैं। अन्तमें उस लकड़हारेकी तरह ज्ञानका अध्ययन कोष पाकर आध्यात्मिक क्षेत्रमें वे धनवान् हो जाते हैं।

अनन्य भगवत्प्रेमसे ही जीवनकी सार्थकता

(श्रीभैरवलालजी परिहार)

भगवत्प्रेम भगवान्का साक्षात् स्वरूप ही है। भगवान् सगुण-साकारकी उपासना करनेवालोंके लिये प्रेममय और निर्गुण-निराकारकी उपासना करनेवालोंके लिये आनन्दमय बन जाते हैं। भगवान्का कृष्णावतार और उनके लीला-चरित ऐसे हैं कि वे ज्ञानीको भी बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं 'कर्षति आकर्षति इति कृष्णः'। अद्वैतवेदान्तके महान् तत्त्वज्ञ मधुसूदन सरस्वती उनकी भुवनमोहिनी छविसे आकर्षित होकर कहते हैं—

ध्यानाभ्यासवशीकृतेन मनसा तन्निर्गुणं निष्क्रियं
ज्योतिः किञ्चन योगिनो यदि परं पश्यन्ति पश्यन्तु ते।

अस्माकं तु तदेव लोचनचमत्काराय भूयाच्चिरं
कालिन्दीपुलिनेषु यत्किमपि तन्नीलं महो धावति॥

अर्थात् ध्यानाभ्याससे मनको स्ववश करके योगीजन यदि किसी प्रसिद्ध निर्गुण, निष्क्रिय परमज्योतिको देखते हैं तो वे उसे भले ही देखें, हमारे लिये तो श्रीयमुनाजीके तटपर जो 'कृष्ण' नामवाली वह अलौकिक नीलज्योति दौड़ती-फिरती है, वही चिरकालतक लोचनोंको चकाचौंधमें डालनेवाली हो।

शास्त्रों और सन्तोंके उपदेशोंमें मनुष्य-शरीरकी दुर्लभता तथा महत्ताके सम्बन्धमें विस्तारपूर्वक समझाया गया है। यह देवदुर्लभ मनुष्य-शरीर भगवान्की अहैतुकी कृपासे ही मिलता है। 'कबहुँक करि करुना नर देही। देत ईस बिनु हेतु सनेही॥' (रा०च०मा० ७।४४।६)

अतः यह समझनेयोग्य बात है कि हमें इस मनुष्य-शरीरमें उसी वस्तुकी प्राप्तिके लिये प्रयास करना चाहिये, जो सर्वश्रेष्ठ हो, जिससे हमें परम लाभ हो तथा जिसकी प्राप्तिसे हमारे सम्पूर्ण दुःखोंका सदा-सदाके लिये अन्त हो जाय तथा परमानन्दकी प्राप्ति भी हो जाय। ऐसी वस्तु एकमात्र श्रीभगवान् ही हैं और उनकी प्राप्ति होती है केवल उनके प्रति अनन्य प्रेमसे। स्वयं भगवान्ने गीतामें इस बातकी पुष्टि की है—

नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया।

शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा॥

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन।

ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप॥

(११।५३-५४)

हे अर्जुन! जिस प्रकार तुमने मुझको देखा है, इस प्रकार चतुर्भुज रूपवाला मैं न वेदोंसे, न तपसे, न दानसे और न यज्ञसे ही देखा जा सकता हूँ, परंतु हे परन्तप अर्जुन! अनन्य भक्तिके द्वारा इस प्रकार चतुर्भुज रूपवाला मैं प्रत्यक्ष देखनेके लिये, तत्त्वसे जाननेके लिये और प्रवेश करनेके लिये अर्थात् एकीभावसे प्राप्त होनेके लिये भी शक्य हूँ।

अतः यह सुस्पष्ट है कि अनन्य भगवत्प्रेम ही हमारे जीवनका एकमात्र लक्ष्य होना चाहिये। शास्त्रोंके अनुसार तो एकमात्र इसी लक्ष्यकी प्राप्तिके लिये हमें यह मनुष्य-शरीर मिला है। भगवान्के चरणकमलोंमें प्रेम होना ही सम्पूर्ण साधनोंकी सिद्धि है और यही इस जीवनका फल है—'साधन सिद्धि राम पग नेहू।' (रा०च०मा० २।२८९।८) गोस्वामी तुलसीदासजी महाराजने रामप्रेमको ही जीवनका सार बताते हुए लिखा है—

सियराम-सरूप अगाध अनूप बिलोचन-मीननको जलु है।
श्रुति रामकथा, मुख रामको नाम, हिउँ पुनि रामहिको थलु है॥
मति रामहि सों, गति रामहि सों, रति रामसों, रामहि को बलु है।
सबकी न कहै, तुलसीके मतें इतनो जग जीवनको फलु है॥

(कवितावली, उत्तर० ३७)

मुक्तिके लिये ज्ञान अनिवार्य है—'ऋते ज्ञानान् मुक्तिः' किंतु भगवत्प्रेमके बिना यह ज्ञान भी शोभा नहीं देता—

सोह न राम पेम बिनु ग्यानू। करनधार बिनु जिमि जलजानू॥

(रा०च०मा० २।२७७।५)

श्रीमद्भागवतमें कहा गया है कि भगवत्प्रेमसे रहित निर्मल ज्ञान भी अशोभनीय है—

नैष्कर्म्यमप्यच्युतभाववर्जितं

न शोभते ज्ञानमलं निरञ्जनम्।

(१।५।१२)

संसारकी कोई भी वस्तु, व्यक्ति या परिस्थिति हमें तत्त्वतः मिल ही नहीं सकती; क्योंकि यह असत् 'नहीं' तत्त्व है। हमारे अनन्त जन्म हो चुके हैं और हमारे उन जन्मोंके अनन्त माता-पिता, पत्नी, पुत्र, धन-सम्पत्ति बदल गये। वे सब आज कहाँ हैं? वे सब 'नहीं' में बदल गये। इसी प्रकार इस जन्मके भी सभी सम्बन्धी, धन-वैभव आदि 'नहीं' में बदल जायँगे, इनकी यादतक

सरःसमद्रनद्यादीन्विहाय चातको यथा ॥

सपनोंको यथार्थमें कैसे बदलते हैं ?

(श्रीदीनानाथजी झुनझुनवाला)

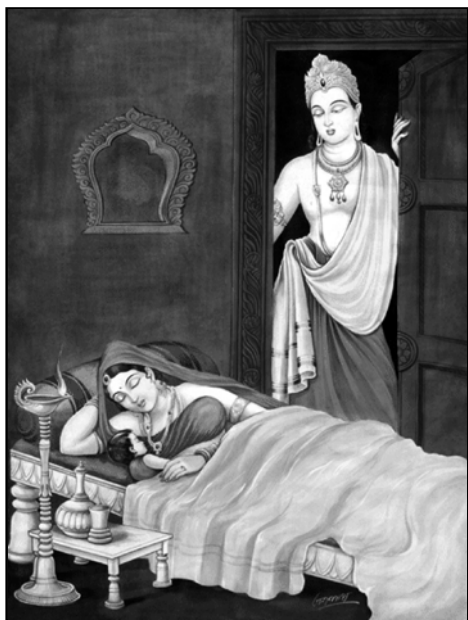
सपनोंको यथार्थमें बदलनेवाला ही महान् होता है । सपनोंको जो केवल सपनोंतक ही सीमित रखते हैं, उनमें महानताके कोई लक्षण नहीं होते । यहाँ कतिपय महापुरुषोंके उदाहरणोंको प्रस्तुत किया जा रहा है, जिन्होंने सपनोंको यथार्थमें बदला और महान् हुए ।

भगवान् बुद्ध राजा शुद्धोधनके एकमात्र पुत्र थे । राज्यके उत्तराधिकारी थे । शरीरसे सुगठित थे । सभी विद्याओंमें पारंगत थे । वे विद्वान् तो थे ही, साथ ही धनुर्विद्या, घुड़सवारी आदिमें भी पारंगत थे । राज्यकी सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी यशोधरासे उनका विवाह भी हो गया था । महलमें आमोद-प्रमोदके सभी साधन सुलभ थे । पुत्र भी हो गया था । राज्यमें भ्रमणके दौरान उन्होंने एक शव, एक कमर झुके हुए वृद्ध और एक रोगीको देखा तो उनके अन्तःकरणमें यह भावना आ गयी कि संसारमें दुःख है । अतः दुःखका कारण एवं निवारण खोजना है ताकि प्रत्येक व्यक्ति दुःखसे मुक्ति पा सके । दुःखसे मुक्तिकी उनकी लालसा इतनी प्रबल हो गयी कि मात्र उन्तीस वर्षकी आयुमें सुन्दर पत्नी, सात

कष्टोंको झेला होगा ! जहाँ न खानेका ठिकाना, न सोनेका ठिकाना और न वस्त्रका ठिकाना । महलकी सारी सुविधाओंसे वंचित हो गये । उद्देश्य था दुःखसे मुक्तिका उपाय खोजना— सम्पूर्ण मानवताको दुःखोंसे त्राण दिलाना । उपाय खोजनेमें जो भी कष्ट आये, उसको सहर्ष झेला । छः वर्ष जंगलमें बिताये । बहुत-से साधु-सन्तों, महात्माओंसे मिले, लेकिन इनकी दुःख-मुक्तिका उपाय खोजनेकी जिज्ञासा शान्त नहीं हुई । अन्तमें गयामें पीपलवृक्षके नीचे समाधि लगायी यह सोचकर कि जबतक मुझे दुःखसे मुक्तिका उपाय नहीं पता लगेगा, तबतक मैं नहीं उठूँगा । उनचास दिनोंकी समाधिके बाद इन्हें ज्ञानकी प्राप्ति हुई । इस ज्ञानप्राप्तिके कारण ये दुःखसे मुक्तिका उपाय जान पाये ।

महामना मदन मोहन मालवीयने भी अपने सपनेको यथार्थमें बदलनेमें सफलता पायी । आज भी उनका यथार्थ काशी हिन्दू विश्वविद्यालयके रूपमें आप देख सकते हैं । इस अकिंचन ब्राह्मणने जब विश्वविद्यालय स्थापित करनेका संकल्प लिया तो बहुतोंने इन्हें पागल होनेकी संज्ञा दे डाली; कारण जो काम बड़े-बड़े राजा, महाराजा, धनी एवं सम्पन्न व्यक्ति नहीं कर सके, वह काम यह अकिंचन ब्राह्मण कैसे कर लेगा ! लेकिन संकल्पके धनी इस व्यक्तिने अपने उद्देश्यकी पूर्तिके लिए सभी राजाओं, महाराजाओं एवं धनी व्यक्तियोंके आगे अपनी योजना रखी और सहयोगकी अपील की और इस शुभ संकल्पको पूरा कर सके । मालवीयजी महाराजने सपनेको यथार्थमें बदलनेमें कितना-कितना अपमान सहा, यात्रामें कितना कष्ट सहा, लेकिन अपमान और यात्रा-कष्ट भी इनको अपने संकल्पसे डिगा नहीं सके । इनके इसी त्यागके कारण जनताने इन्हें ‘महामना’ की उपाधि दी और भारत सरकारने मरणोपरान्त ‘भारत-रत्न’ की उपाधि देकर इन्हें अलंकृत किया । ऐसे संकल्पके धनी व्यक्ति ही सपनोंको यथार्थमें बदलनेकी क्षमता रखते हैं ।

महात्मा गांधीने भी देशको आजाद करानेके सपनेको यथार्थमें बदल दिया, लेकिन त्याग, तपस्या, कुर्बानीके



दिनके पुत्र, महल एवं राज्यको छोड़कर जंगलकी राह पकड़ ली । महलके सुखोंको भोगनेवाला कैसे जंगलके

सपनोंको यथार्थमें बदलनेके उदाहरण तो इतिहासमें भरे पड़े हैं, लेकिन सभीमें एक बात समान रूपसे मिलेगी कि बिना दृढ़संकल्प, पुरुषार्थ, त्याग, तपस्या, बलिदानके कोई महान सपना यथार्थमें बदलना सम्भव नहीं है।

अगर मैं राम प्यारेके गलेका हार हो जाता ।
 तो मुमकिन था कि मुझ पापीका भी उद्धार हो जाता ॥
 श्रद्धासे गर कभी मैं भी प्रभूका नाम जप लेता ।
 तो मिस्ले बाल्मीकी-सा जगतसे पार हो जाता ॥
 अगर शबरी-सी थोड़ी भी मुहब्बत रामसे होती ।
 तो क्या आश्चर्य! हासिल मुझको भी दीदार हो जाता ॥
 विभीषणकी तरह मेरी लगन गर रामसे होती ।
 तो मुमकिन था कि मेरा दूर सब आजार हो जाता ॥
 अगर हनुमानके मानिन्द भक्ती रामकी करता ।
 तो इसमें शक नहीं उनको मेरा भी प्यार हो जाता ॥
 अगर तुलसी-सी चाह जो हृदयमें मेरे हो जाती ।
 तो मित्रो राम-दर्शन भी मुझे कई बार हो जाता ॥

‘भाई साहब! आज मेरा पेट ख़ूब भरा है।’ महेशने

एक दुर्बल देह, श्यामवर्ण, श्वेतकेश वृद्ध चटाईपर बैठे मिले उस मकानके ऊपरके कमरेमें। मस्तक तथा दाढ़ीके केश सम्भवतः पन्द्रह दिनके बड़े थे। शरीरपर बगलबन्दी और कटिमें एक वस्त्रखण्ड। वस्त्र स्वच्छ थे;
 बना। MADE WITH LOVE BY Ayinash/Sri

उपर्युक्त विवेचनसे मूर्तियों एवं छबियोंमें भगवद्-विभूतिका विद्यमान होना बताया गया। पाठकोंको कदाचित् वह सुसंगत प्रतीत हुआ होगा, किंतु जबतक वे मूर्तिया एवं छबियाँ प्रतिष्ठित नहीं होतीं, अर्थात् जबतक पूजा एवं आराधनाके द्वारा उनमें भगवद्-आवेश नहीं कराया जाता तबतक उनमें भगवत्सत्ता गौण रूपसे—सामान्य रूपसे रहती है। अब रहा यह सवाल कि जब मूर्तियों एवं छबियोंमें भगवद्-आवेश हो गया, तब तो वे हमारी कामना अवश्य ही पूर्ण कर सकती हैं। फिर भी वे ऐसा क्यों नहीं करतीं? इसका उत्तर यही है कि उनके भगवत्स्वरूप होनेके विषयमें हमारी धारणा परिपक्व नहीं होती। जब हमारा संकल्प ही इच्छित रूप धारण करता है, तो उस संकल्पमें जबतक कचाई (कच्चापन) रहेगी, तबतक उसके अनुरूप क्रिया होनेमें भी त्रुटि रहेगी। दूसरी बात यह है कि जबतक हमारा संघर्षण अधूरा रहेगा, उसका फल ईश्वरीय विभूतिका प्राकट्य सांगोपांग कैसे होगा? तीव्र रगड़से ही तो आग

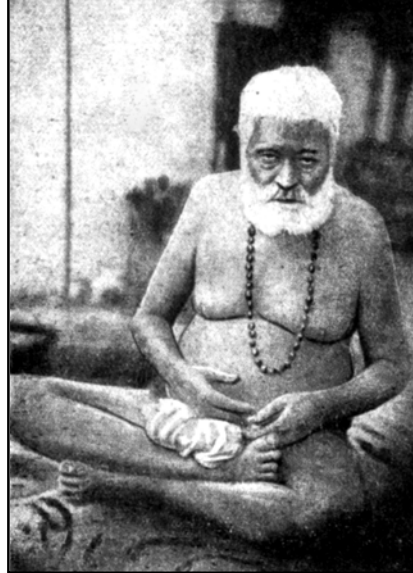
दौलत पाय न कीजिये, सपनेहुमें अभिमान ।
 चंचल जल दिन चारिको, ठाँव न रहत निदान ॥
 ठाँव न रहत निदान, जियत जगमें यश लीजै ।
 मीठे वचन सुनाय, विनय सबहीसों कीजै ॥
 कह गिरधर कविराय, अरे यह सब घट तौलत ।
 पाहुन निशिदिन चार, रहत सबहीके दौलत ॥
 पानी बाढ़ै नावमें, घरमें बाढ़ै दाम ।
 दोनों हाथ उलीचिये, यही सयानो काम ॥
 यही सयानो काम रामको सुमिरन कीजै ।
 परस्वारथके काज शीश आगे धरि दीजै ॥
 कह गिरधर कविराय बड़नकी याही बानी ।
 चलिये चाल सचाल राखिये अपनो पानी ॥

संत-चरित—

स्वामी श्रीविशुद्धानन्दजी सरस्वती

(महामहोपाध्याय पं० श्रीप्रमथनाथजी तर्कभूषण)

[उन्नीसवीं शताब्दीमें स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वतीके नामसे दो महापुरुषोंका आविर्भाव हुआ। यहाँ जिनके विषयमे लेख प्रकाशित हुआ है, उनका जन्म उन्नीसवीं शताब्दीके प्रारम्भमें हुआ था। आर्यसमाजके प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वतीसे काशीमें जो शास्त्रार्थ हुआ, उसमें सनातनधर्मकी ओरसे आप समुपस्थित थे। महामहोपाध्याय पं० श्रीप्रमथनाथजी इन्हींके शिष्य थे। दूसरे परमहंस स्वामी विशुद्धानन्दजीका जन्म उन्नीसवीं शताब्दीके उत्तरार्धमें हुआ था। वे सूर्यविज्ञानप्रणेताके रूपमें प्रसिद्ध हुए। इनके प्रसिद्ध शिष्य महामहोपाध्याय पं० श्रीगोपीनाथजी कविराज हुए।—सम्पादक]



वाराणसीधामके सुप्रसिद्ध दण्डी स्वामी परमहंस परिव्राजकाचार्य श्रीमत् स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वतीने सन् १८९८ ई० के वैशाखमासमें अहल्याबाईघाटपर अपने आश्रममें ८२ वर्षकी वयस्में भौतिक देहका परित्यागकर निर्वाण प्राप्त किया था। उनके वेदान्तशास्त्रके अगाध पाण्डित्यकी प्रशंसा आज भी समस्त भारतके विद्वान् करते हैं। उनकी सर्वतोमुखी असाधारण प्रतिभाकी बातें वृद्ध विद्वानोंसे सुनकर शिक्षित युवक विस्मित हो जाते हैं। उनके आध्यात्मिक जीवनमें ऐसी अनेकों आश्चर्यमयी घटनाएँ हैं, जिनकी आलोचना करनेसे हिन्दूमात्रके आध्यात्मिक जीवनमें नवीन प्रकाशकी किरणें प्रसारित होंगी और भारतीय प्राचीन साधु-महात्माओंके प्रति श्रद्धा-भक्ति बढ़ेगी। कल्याणके पाठकोंके हितार्थ इसी सम्बन्धमें कुछ प्रत्यक्ष की हुई बातें लिखी जाती हैं।

चरणोंमें बैठकर पूर्व और उत्तरमीमांसा पढ़नेका दुर्लभ सुयोग प्राप्त हुआ था। अध्ययन आरम्भ करनेके समय मेरी उम्र बीस वर्षकी थी। स्वाध्यायतिथियोंमें प्रतिदिन दोसे तीन-साढ़े तीन बजेतक मेरा पाठ चलता। एक दिन वर्षाकालमें श्रावणके अन्तमें लगभग तीन बजे मैं अध्ययन कर रहा था, उस समय बड़े जोरोंसे वर्षा हो रही थी। अहल्याबाईघाटपर स्वामीजीका आश्रम था, उसमें ऊपरके तल्लेमें एक छोटे घरमें स्वामीजी उत्तराभिमुख अपने आसनपर विराजमान थे। मैं पूर्वकी ओर मुँह करके बैठा था। सामने श्रावणकी पूर्णावयवा उत्तरवाहिनी भागीरथी अपनी कलकल ध्वनिसे अविश्रान्त वर्षाध्वनिसे मुखरित दिशाओंको प्रतिध्वनित करती हुई प्रवाहित हो रही थीं। स्वामीजी पद्मासनसे बैठे थे, उनके विशाल प्रशान्त नेत्रोंसे हृदयस्थित ज्योत्स्नाद्वारा स्नात एक अननुभूतपूर्व समुज्ज्वल अध्यात्मज्योति विकसित हो रही थी, सामने द्रवब्रह्ममयी भागीरथीजी थीं। मेरे हाथमें छान्दोग्योपनिषद्की पुस्तक थी, स्वामीजी महाराज उसीकी व्याख्या कर रहे थे। वह अपूर्व मनोहर दृश्य आज भी मेरे स्मृतिपटपर गाढ़रूपसे अंकित है। छान्दोग्योपनिषद्के छठे अध्यायमें प्रयाणके समय दक्षिणमार्गकी गति उस दिनका पाठ्य विषय था—

‘पुरुषः सोम्यो तोपतापिनं ज्ञातयः पर्युपासते
जानासि मां जानासि मामिति । तस्य यावन्न वाङ्मनसि
सम्पद्यते मनः प्राणे प्राणस्तेजसि तेजः परस्यां देवतायां
तावज्जानाति ।

अथ यदास्य वाङ्मनसि सम्पद्यते मनः प्राणं
प्राणस्तेजसि तेजः परस्यां देवतायामथ न जानाति।' Form 1 MADE WITH LOVE BY Arjunach/Ch



अर्थात् मनुष्य जब मृत्युशय्यापर पड़ा हुआ सन्तापको प्राप्त होता है, तब उसके घरके लोग उसके समीप आकर व्याकुलतासे पूछते हैं—‘मुझको पहचानते हो क्या? मुझे पहचान गये?’ इत्यादि। उसकी बहिरिन्द्रिय जबतक मनमें नहीं मिल जाती, मन प्राणमें विलीन नहीं हो जाता, प्राण तेजोधातुमें परिणत नहीं हो जाते और तेज भी पर-देवतामें प्रवेश नहीं कर जाता, तभीतक वह उन लोगोंको पहचान सकता है। जब बहिरिन्द्रिय मनमें मिल जाती है, मन प्राणोंमें विलीन हो जाता है, प्राण तेजोधातुमें परिणत हो जाते हैं और अन्तमें जब तेज भी पर-देवतामें प्रविष्ट हो जाता है, तब वह किसीको भी नहीं पहचान सकता, उसका ज्ञान विलुप्त हो जाता है, यही उसका मरण है।

इस प्रसंगमें स्वामीजी उस दिन देवयान या उत्तरमार्गकी बात चलाकर कहने लगे—‘जो योगी है, उसका प्रयाण इस तरह नहीं होता। प्रत्येक मनुष्यके हृदयकमलके ऊपर कुछ सूक्ष्म नाड़ियाँ हैं, इन नाड़ियोंको सिता कहते हैं, इनमें किसीका वर्ण लाल है, किसीका पीला आदि है। ये नाड़ियाँ अत्यन्त सूक्ष्म हैं, यहाँतक कि केशके सौवें भागके समान इनकी सूक्ष्मता है। इन सूक्ष्म नाड़ियोंमें एकका नाम है सुषुम्ना। यह सुषुम्ना ऊर्ध्वमें ब्रह्मरन्ध्रतक गयी है। इस सुषुम्नामें योगबलसे अपना प्रवेश कराकर जो योगी प्रयाण करता है, वह फिर लौटकर इस संसारमें नहीं आता। ब्रह्मलोकमें उसकी गति होती है और कल्पान्तके समय ब्रह्मलोकके अधिष्ठाता सगुण ब्रह्मके साथ वह निर्वाणको प्राप्त होता है।’ सनातनधर्मकी इन आध्यात्मिक बातोंको पूज्यपाद स्वामीजी महाराज उस दिन बड़ी ही स्फूर्तिके साथ—बड़े ही अभिनिवेश और उत्साहके साथ कह रहे थे। किंतु न मालूम क्यों, मेरे मनमें वे बातें मानो उस दिन गम्भीरताके साथ प्रवेश नहीं कर रही थीं, मेरी बेजानकारीमें शायद गुरुदेव स्वामीजी महाराजने मेरे चेहरेको या मेरी अन्य किसी शारीरिक चेष्टाको देखकर मेरी अन्यमनस्कताकी बातको जान लिया और बड़ी रुखाईके साथ जरा उत्तेजित—से होकर मेरी ओर देखकर कम्पित स्वरसे बोले—‘प्रमथनाथ!

आज यहीं पाठ बन्द करो, तुम्हारा चेहरा देखकर मालूम होता है कि मैं तुम्हें जो कुछ कह रहा हूँ, वे सब बातें सत्यपर प्रतिष्ठित हैं या नहीं, तुम्हारे मनके इस सन्देहने तुम्हारे चित्तको श्रद्धाहीन कर दिया है। जिसके मनमें श्रद्धा नहीं है, उसके लिये इन बातोंका न सुनना ही अच्छा है और कहनेवालेके लिये भी यह विडम्बनामात्र है।’

पूज्य स्वामीजीके मुखसे ऐसी कड़ी बातें मैंने इससे पहले कभी नहीं सुनी थीं। इन बातोंको सुनकर मुझे बड़ा दुःख हुआ, मैंने जल्दीसे उठकर उनके चरणोंपर गिरकर भक्तिभावसे अश्रुसिक्त नेत्रोंसे प्रणाम किया और कहा—‘गुरुदेव! मैं अज्ञ हूँ, मेरे इस अज्ञानकृत प्रथम अपराधको आप यदि क्षमा नहीं करेंगे तो मेरा जीवित रहना भी विडम्बनामात्र है।’ मेरे इन शब्दोंको सुनकर स्वामीजी बहुत देरतक गम्भीरतासे चुपचाप बैठे रहे, फिर बहुत धीरेसे मेरी ओर देखकर कहने लगे—‘अच्छी बात है, मैंने क्षमा किया। इस प्रसंगमें मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूँ, खूब ध्यान देकर सुनो।’ स्वामीजीके इन शब्दोंसे आश्वस्त होकर मैं अपनी जगह हाथ जोड़े बैठा हुआ उनके चेहरेकी ओर देखने लगा और बड़े आग्रहके साथ उनकी बातें सुननेके लिये उत्सुकतासे बाट देखने लगा। कुछ देर बाद स्वामीजी कहने लगे—

‘आजकल ज्यों-ज्यों पाश्चात्य शिक्षाका प्रभाव बढ़ रहा है, त्यों-त्यों संस्कृतशिक्षापद्धतिका प्रचुर रूपमें हास हो रहा है। अध्यात्मशास्त्रके प्रति लोगोंकी अश्रद्धा होना इसीका परिणाम है। परन्तु यह अश्रद्धा ही हिन्दू-समाजका सर्वनाश कर रही है, इस बातको याद रखना। मैं जो तुम्हें सुषुम्ना नाड़ीद्वारा उत्क्रमणकी बात कह रहा था, यह कोई कविकल्पना या धर्मोन्मादना नहीं है, ध्रुव सत्य है। इसकी ध्रुव सत्यताका मैंने निजमें अनुभव किया है; और स्वयं जाना है तथा विश्वास किया है, इसीसे तुमसे कह रहा था। तुम देखते हो, मैं प्रतिदिन प्रातःकाल स्नानके बाद आठ बजेके समय इस घरमें प्रवेश करके सब दरवाजोंको बन्द करके दोपहरतक बैठता हूँ। इन चार घण्टोंमें मुझसे कोई भी मिल नहीं सकता, यहाँतक

गोमूत्रसे कैंसरका सफल इलाज

(श्रीउमेशजी पोरवाल)

कैंसर हमारे देशमें बहुत तेजीसे बढ़ रहा है। हर साल लाखों लोग कैंसरसे मर रहे हैं और सभी डॉक्टर्स हथियार डाल चुके हैं। प्राकृतिक चिकित्साके प्रबल समर्थक स्वर्गीय राजीव दीक्षितजी कहा करते थे—याद रखना कि कैंसरके मरीजोंकी कैंसरसे मृत्यु नहीं होती, जो उपचार उन्हें दिया जाता है, उससे मृत्यु सबसे अधिक होती है।

माने कैंसरसे ज्यादा खतरनाक कैंसरका उपचार है। उपचार कैसा? आप सभी जानते हैं... कीमोथैरेपी दे दिया, रेडियोथैरेपी दे दिया। इसमें क्या होता है कि शरीरकी जो प्रतिरक्षक शक्ति है, वह बिलकुल खत्म हो जाती है। जब कीमोथैरेपी दी जाती है तो डॉक्टर कहते हैं कि हम कैंसरके सेलको मारना चाहते हैं, लेकिन होता क्या है? अच्छे सेल भी उसीके साथ मर जाते हैं। राजीव भाईके पास कीमोथैरेपी लेनेके बाद जो भी रोगी आया, वे उसे बचा नहीं पाये। लेकिन इसका उलटा रिकार्ड है... उनके पास बिना कीमोथैरेपी लिये हुए जो भी रोगी आये दूसरी या तीसरी स्टेजतकके, वे एक भी नहीं मरे।

मतलब क्या है, इलाज लेनेमें जो खर्च आपने कर दिया, वह तो गया ही और रोगी भी आपके हाथसे गया। डॉक्टर आपको भूलभुलैयामें रखता है, अभी छः महीनेमें ठीक हो जायगा। आठ महीनेमें ठीक हो जायगा, लेकिन अन्तमें वह मर ही जाता है। अगर किसीको कैंसर हो जाये ज्यादा खर्च मत करिये; क्योंकि कीमोथैरेपी लाभदायक नहीं होती, जो खर्च आप करेंगे, उससे मरीजको आराम नहीं मिलता बल्कि इतना कष्ट होता है कि आप कल्पना भी नहीं कर सकते।

उसको जो टीके दिये जाते हैं, जो गोलियाँ खिलायी जाती हैं, उससे उसके भौंहके बाल उड़ जाते हैं, उसको जो कीमोथैरेपी दी जाती है, उससे सारे बाल झड़ जाते हैं, चेहरा इतना डरावना लगता है कि पहचानमें नहीं आता

कि ये अपना ही आदमी है? इतना कष्ट क्यों दे रहे हो उसको? सिर्फ इसलिये कि आपको एक अहंकार है कि आपके पास बहुत पैसा है तो आप उपचार कराके ही मानेंगे? आप सोचते होंगे कि यदि हम उपचार नहीं करायेंगे तो आस-पड़ोसके लोग क्या कहेंगे? आप अपने आस-पड़ोसकी बातें ज्यादा मत सुनिये।

हो सकता है कई बार ये Innocently कहते हों, उनका Intention खराब नहीं होता हो, लेकिन उनको ज्ञान कुछ भी नहीं है, बिना ज्ञानके वे सुझाव-पर-सुझाव देते जाते हैं और कई बार अच्छा खासा पढ़ा-लिखा आदमी भी फँसता है, उसीमें रोगीको भी गवाँता है, पैसा भी जाता है।

कैंसरके लिये क्या उपाय करें?

हमारे घरमें कैंसरके लिये एक बहुत अच्छी दवा है... अब डॉक्टरोंने भी मान लिया है, पहले तो वे मानते ही नहीं थे। दुनियामें एक ही दवा है Anti-Cancerous उसका नाम है—हल्दी। हल्दी कैंसर ठीक करनेकी ताकत रखती है। कैसे ताकत रखती है, वह जान लीजिये। हल्दीमें एक केमिकल है, उसका नाम है कर्कुमिन (Carcumin) और यह ही कैंसर-कोशिका (Cell)-को मार सकता है। बाकी कोई केमिकल दुनियामें नहीं बना और यह भी आदमीने नहीं भगवान्ने बनाया है। हल्दी-जैसा ही कर्कुमिन और एक चीजमें है, वह है देशी गायके मूत्रमें। गोमूत्र माने देशी गायके शरीरसे निकला हुआ सीधा-साधा मूत्र, जिसे सूती कपड़ेसे छानकर लिया गया हो। तो देशी गायका मूत्र अगर आपको मिल जाय और हल्दी आपके पास हो तो आप कैंसरका इलाज आसानीसे कर पायेंगे।

अब देशी गायका मूत्र आधा कप और आधा चम्मच हल्दी दोनों मिलाकर गरम करना, जब उबाल आ जाये तो उसको ठंडा कर लेना। सामान्य तापमानमें आनेके बाद रोगीको चायकी तरह पिलाना है... चुस्कियाँ

ले-लेकर। एक और आयुर्वेदिक दवा है पुनर्नवा, जिसको अगर आधा चम्मच इसमें मिलायेंगे तो और अच्छा परिणाम आयेगा। जो आयुर्वेदकी दुकानमें पाउडर या छोटे-छोटे टुकड़ोंमें मिलती है। याद रखें, इस दवामें सिर्फ देशी गायका मूत्र ही काममें आता है, विदेशी गायका मूत्र कुछ काम नहीं आता। और जो देशी गाय काले (श्याम) रंगकी हो, उसका मूत्र सबसे अच्छा परिणाम देता है।

इस दवाको (देशी गायका मूत्र, हल्दी, पुनर्नवा) सही अनुपातमें मिलाकर उबालकर ठंडा करके काँचके पात्रमें डाल करके रखिये, पर बोतलको कभी फ्रिजमें मत रखिये, धूपमें मत रखिये। यह दवा कैँसरके सेकेंड स्टेजमें और कभी-कभी थर्ड स्टेजमें भी बहुत अच्छे परिणाम देती है। जब स्टेज थर्ड क्रास करके फोर्थमें पहुँच गया हो तब रिजल्टमें प्रॉबलम आती है और अगर आपने किसी रोगीको कीमोथैरेपी वगैरह दे दिया तो फिर इसका कोई असर नहीं होता। अगर कीमोथैरेपी स्टार्ट नहीं हुई है और उसने कोई एलोपैथी उपचार शुरू नहीं किया तो आप देखेंगे इसके चमत्कारिक (Miraculous) रिजल्ट आते हैं। इसमें एक सावधानी रखनी है कि गायका मूत्र लेते समय वह गर्भवती नहीं होनी चाहिये। गायकी जो बछड़ी है, जो माँ नहीं बनी है, उसका मूत्र आप कभी भी प्रयोग कर सकते हैं।

ये तो बात हुई कैंसरकी चिकित्साकी, पर जिन्दगीभर कैंसर हो ही न, यह जानना और भी अच्छा है। उसके लिये एक चीज याद रखिये कि जो खाना खायें, उसमें वनस्पति घी या Refined Oil के स्थानपर हमेशा शुद्ध तेल खायें अर्थात् सरसों, नारियल, मूँगफलीका तेल खानेमें प्रयोग करें और घी अगर खाना है तो देशी गायका शुद्ध घी ही खायें। दूसरे ये देख लीजिये कि जो भी खाना खा रहे हैं, उसमें छिलकेवाली दालें,

आप ऐसा खाना खा रहे हैं और चावल भी छिलकेवाले खा रहे हैं तो बिलकुल निश्चिन्त रहिये, कैंसर होनेका कोई चांस नहीं है। कैंसरके सबसे बड़े कारणोंमें दो-तीन कारण और मुख्य हैं—

एक तो कारण है तम्बाकू, दूसरा है बीड़ी, तीसरा सिगरेट और चौथा है गुटका—इन चार चीजोंको तो कभी भी हाथ मत लगाइये; क्योंकि पूरे देशमें कैंसर ज्यादातर इन्हींके कारण है। कैंसरके बारेमें सारी दुनिया एक ही बात कहती है, चाहे वे डॉक्टर हों या विशेषज्ञ सभी इससे बचाव ही इसका उपचार बताते हैं।

महिलाओंको आजकल बहुत कैंसर हो रहा है। गर्भाशयमें, स्तनोंमें यह काफी तेजीसे बढ़ रहा है। पहले Tumour होता है, फिर कैंसरमें Convert हो जाता है। ऐसेमें माताओं-बहनोंको क्या करना चाहिये, जिससे जिन्दगीमें कभी Tumour न होने पाये। आपके लिये सबसे अच्छा बचाव है कि जैसे ही आपको अपने शरीरके किसी भी हिस्सेमें Unwanted Growth रसौली, गाँठका पता चले तो जल्द ही आप सावधान हो जाइये। हालाँकि सभी गाँठ या सभी रसौली कैंसर नहीं होतीं, लेकिन आपको सावधान तो होना ही पड़ेगा। माताओं-बहनोंको अगर कहीं भी गाँठ या रसौली हो गयी तो जल्दी-से-जल्दी इसे गलाना चाहिये और घोल देनेकी दुनियामें सबसे अच्छी दवा है चूना। वही जो पानमें खाया जाता है, जो पोताईमें इस्तेमाल होता है। पानवालेकी दूकानसे चूना ले आइये, इस चूनेको चनेके दानेके बराबर रोज खाइये। इसको खानेका तरीका है पानीमें घोलकर पानी पी लीजिये, दहीमें घोलकर दही पी लीजिये, लस्सीमें घोलकर लस्सी पी लीजिये, दालमें घोलकर दाल पी लीजिये, सब्जीमें डालकर सब्जी खा लीजिये, पर ध्यान रहे पथरीके रोगीके लिये चूना वर्जित है।

साधनोपयोगी पत्र

(१)

जीवनका उद्देश्य

प्रिय महोदय, सादर सप्रेम हरिस्मरण! आपका एक पत्र प्राप्त हुआ।

आपने लिखा—‘योगवासिष्ठ, रामायण, भागवत, भक्तमाल, सेवा-अंक, श्रीमद्देवीभागवत, नरसिंहपुराण आदि कई ग्रन्थ पढ़े, लेकिन मेरे मानस-पटलपर कोई असर नहीं हुआ।’ आपने यह भी लिखा कि एक दृष्टान्त देकर जीवन सफल होनेका आधार बतानेकी कृपा करें।

जबतक संसारके पदार्थों, वस्तुओं एवं व्यक्तियोंमें आसक्ति बनी रहती है, तबतक आध्यात्मिक बातोंका असर मानस-पटलपर नहीं हो पाता। इसलिये इसी जीवनमें अपना कल्याण करनेके लिये जीवका एकमात्र उद्देश्य भगवत्प्राप्ति होना चाहिये, तभी सद्ग्रन्थोंमें बतायी गयी बातोंको अपने जीवनमें उतारा जा सकेगा।

भगवान् शंकराचार्यने विवेकचूडामणिमें लिखा है कि तीन बातें अत्यन्त दुर्लभ हैं और वे भगवत्कृपा तथा अपने पुण्य-पुंजोंसे प्राप्त होती हैं—

दुर्लभं त्रयमेवैतद् देवानुग्रहहेतुकम्।

मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं महापुरुषसंश्रयः ॥

पहली बात है, मनुष्य-जन्म प्राप्त होना तथा मनुष्यत्वको प्राप्त करना; चौरासी लाख योनियोंमें भटकता प्राणी भगवत्कृपासे मनुष्य-जन्म प्राप्त करता है, मनुष्य-जन्म पाकर भी उसमें मनुष्यता होनी चाहिये, पशुता नहीं।

दूसरी बात है मुमुक्षा अर्थात् इसी जन्ममें जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त होनेकी सुदृढ़ इच्छा (इसी जीवनमें परमात्मप्रभुको प्राप्त करनेकी दृढ़ भावना) और तीसरी बात है महापुरुषकी संनिधि अर्थात् जीवनमें किसी महापुरुषका सांनिध्य अथवा सत्संगकी प्राप्ति, महापुरुषोंद्वारा प्रणीत आर्ष ग्रन्थोंका—उनके सुन्दर चरितोंका पठन-पाठन करना।

सन्त श्रीचरनदासजीने एक दृष्टान्त लिखा है—कोई एक नगर था, जहाँका यह नियम था कि उस नगरका कोई

एक व्यक्ति एक वर्षके लिये वहाँका राजा बनाया जाता। एक वर्षके बाद नदीके उस पार एक भीषण जंगलमें उसे छोड़ दिया जाता। प्रायः नये-नये लोग प्रतिवर्ष गद्दीपर बैठाये जाते। वर्ष बीतनेपर वे रोते-बिलखते जंगलमें पहुँचा दिये जाते। एक बार एक प्रौढ़ व्यक्तिकी बारी आयी, उसे एक वर्षके लिये वहाँका राजकाज सौंप दिया गया। वर्ष बीतनेपर जब उसे नौकाद्वारा उसपार भेजा जा रहा था तो नाव चलानेवाले नाविकने उससे पूछा—‘सरकार! प्रतिवर्ष जब हम यहाँसे समय पूरा होनेपर राजाको पार ले जाते हैं तो वे रोते-बिलखते हुए जाते हैं, परंतु आप तो हँसते-खेलते हुए जा रहे हैं, इसका क्या कारण है?’ इसपर उस प्रौढ़ व्यक्तिने उत्तर दिया कि जो लोग रोते-बिलखते जाते हैं, वे लोग एक वर्षतक खूब आनन्द, सुख-भोग और आमोद-प्रमोदपूर्वक समय व्यतीत कर देते हैं। इसलिये उन्हें भविष्यकी भयावहताका अनुमान होनेके कारण रोना पड़ता है, परंतु मैंने एक वर्षतक सुख-भोग, आमोद-प्रमोद आदिमें समय नहीं बिताया बल्कि उसपार जहाँ जाना है, वहाँका जंगल साफ कराकर वहाँ प्रकाश, जल, फलादि एवं रहनेकी अन्य सुविधाओंकी व्यवस्था करायी है। इसलिये अब मुझे वहाँ रहनेमें कोई असुविधाका अनुभव नहीं होगा, इस कारण मैं प्रसन्नतापूर्वक जा रहा हूँ।

हम सभीके लिये यह एक प्रेरक दृष्टान्त है। इस मनुष्यलोकमें रहते हुए हम सबको भी परलोकमें आनन्दसे रहनेकी समुचित व्यवस्था कर लेनी चाहिये।

दृष्टान्त तो बहुत हैं, परंतु उनकी शिक्षाको अमलमें लाया जाय तभी उनकी सार्थकता है।

शेष प्रभुकृपा।

(२)

प्रभुका विधान मंगलमय है

आदरणीय बहनजी! सादर सप्रेम हरिस्मरण। आपका एक पत्र दिनांक २३ अगस्त २०१७ ई० को हमारे गोरखपुर कार्यालयसे प्राप्त हुआ। कार्यव्यस्तताके कारण पत्रोत्तर न दिया जा सका।

अतएव आप जरा भी निराश न होइये। जो एक बार भी भगवान्‌के शरण हो गया है, उसके लिये शब्दकोशसे निराशाका शब्द ही निकल गया है। यह निश्चय मानिये। शेष भगवत्कृपा।

सं० २०७५, शक १९४०, सन् २०१८, सूर्य उत्तरायण, वसन्त-ऋतु, वैशाख कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वदि
प्रतिपदा सायं ४।४४ बजेतक	रवि	चित्रा रात्रिशेष ५।४९ बजेतक	१ अप्रैल	तुलाराशि सायं ५।४१ बजेसे।
द्वितीया दिनमें ४।३२ बजेतक	सोम	स्वाती अहोरात्र	२ "	भद्रा रात्रिशेष ४।४३ बजेसे।
तृतीया सायं ४।५२ बजेतक	मंगल	स्वाती प्रातः ६।३३ बजेतक	३ "	भद्रा सायं ४।५२ बजेतक, वृश्चिकराशि रात्रिमें १।३१ बजेसे, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ९।१ बजे।
चतुर्थी " ५।४४ बजेतक	बुध	विशाखा दिनमें ७।५० बजेतक	४ "	× × ×
पंचमी रात्रिमें ७।२ बजेतक	गुरु	अनुराधा " ९।३२ बजेतक	५ "	मूल दिनमें ९।३२ बजेसे।
षष्ठी " ८।४५ बजेतक	शुक्र	ज्येष्ठा " ११।४१ बजेतक	६ "	भद्रा रात्रिमें ८।४५ बजेसे, धनुराशि दिनमें ११।४१ बजेसे।
सप्तमी " १०।४३ बजेतक	शनि	मूल " २।७ बजेतक	७ "	भद्रा दिनमें ९।४३ बजेतक, मूल दिनमें २।७ बजेतक।
अष्टमी " १२।४९ बजेतक	रवि	पूषा ० सायं ४।४३ बजेतक	८ "	मकरराशि रात्रिमें ११।२३ बजेसे।
नवमी " २।५० बजेतक	सोम	उषा ० रात्रिमें ७।१९ बजेतक	९ "	× × ×
दशमी रात्रिशेष ४।३९ बजेतक	मंगल	श्रावण " ९।४५ बजेतक	१० "	भद्रा दिनमें ३।४४ बजेसे रात्रिशेष ४।३९ बजेतक।
एकादशी अहोरात्र	बुध	धनिष्ठा " ११।५४ बजेतक	११ "	कुम्भराशि दिनमें १०।४९ बजेसे, पंचकार्म्य दिनमें १०।४९ बजे।
एकादशी प्रातः ६।७ बजेतक	गुरु	शतभिषा " १।४० बजेतक	१२ "	वरूथिनीएकादशीव्रत (सबका)।
द्वादशी " ७।९ बजेतक	शुक्र	पूषा ० " २।५१ बजेतक	१३ "	मीनराशि रात्रिमें ८।३२ बजेसे, प्रदोषव्रत।
त्रयोदशी दिनमें ७।४२ बजेतक	शनि	उषा ० " ३।३८ बजेतक	१४ "	भद्रा दिनमें ७।४२ बजेसे रात्रिमें ७।४२ बजेतक, मेषसंक्रान्ति दिनमें १०।३ बजे, वैशाखी, खरमास समाप्त, मूल रात्रिमें ३।३८ बजेसे।
चतुर्दशी " ७।४१ बजेतक	रवि	रेवती " ३।५२ बजेतक	१५ "	मेघराशि रात्रि ३।५२ बजेसे, पंचक समाप्त रात्रि ३।५२ बजे, श्राद्धकी अमावस्या।
अमावस्या प्रातः ७।११ बजेतक	सोम	अश्विनी " ३।३८ बजेतक	१६ "	सोमवती अमावस्या, मूल रात्रिमें ३।३८ बजेतक।

सं० २०७५, शक १९४०, सन् २०१८, सूर्य उत्तरायण, वसन्त-ऋतु, वैशाख शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वदि
प्रतिपदा प्रातः ६।११ बजेतक	मंगल	भरणी रात्रिमें २।५९ बजेतक	१७ अप्रैल	×
तृतीया रात्रिमें ३।३ बजेतक	बुध	कृत्तिका " २।२ बजेतक	१८ "	×
चतुर्थी " १।१ बजेतक	गुरु	रोहिणी " १२।४५ बजेतक	१९ "	×
पंचमी " १०।४५ बजेतक	शुक्र	मृगशिरा " ११।१५ बजेतक	२० "	
षष्ठी " ८।२३ बजेतक	शनि	आर्द्रा " ९।३८ बजेतक	२१ "	
सप्तमी सायं ५।५५ बजेतक	रवि	पुनर्वसु " ७।५७ बजेतक	२२ "	
अष्टमी दिनमें ३।३० बजेतक	सोम	पुष्य सायं ६।१९ बजेतक	२३ "	
नवमी " १।१३ बजेतक	मंगल	आश्लेषा " ४।४८ बजेतक	२४ "	
दशमी " ११।४ बजेतक	बुध	मघा दिनमें ३।२८ बजेतक	२५ "	
एकादशी " ९।१२ बजेतक	गुरु	पू०फा० " २।२४ बजेतक	२६ "	
द्वादशी " ७।४० बजेतक	शुक्र	उ०फा " १।४२ बजेतक	२७ "	
त्रयोदशी प्रातः ६।३१ बजेतक	शनि	हस्त दिनमें १।२३ बजेतक	२८ "	
चतुर्दशी " ५।४८ बजेतक	रवि	चित्रा " १।३२ बजेतक	२९ "	
पूर्णिमा " ५।३४ बजेतक	सोम	स्वाती " २।१२ बजेतक	३० "	
				वृषराशि दिनमें ८।४५ बजेसे, श्रीपरशुरामजयन्ती, अक्षयतृतीया। भद्रा दिनमें २।१ बजेसे रात्रिमें १।१ बजेतक, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत। मिथुनराशि दिनमें १२।० बजेसे, आद्यजगद्गुरु श्रीशंकराचार्य-जयन्ती, सायन वृषराशिका सूर्य दिनमें १०।२५ बजे। श्रीरामानुजाचार्य-जयन्ती। भद्रा सायं ५।५५ बजेसे रात्रिशेष ४।४३ बजेतक, कर्कराशि दिनमें २।२३ बजेसे, श्रीगंगासप्तमी। मूल सायं ६।१९ बजेसे। सिंहराशि सायं ४।४८ बजेसे, श्रीजानकीजयन्ती, श्रीसीतानवमी। मूल दिनमें ३।२८ बजेतक, भद्रा रात्रिमें १०।९ बजेसे। भद्रा दिनमें ९।१२ बजेतक, कन्याराशि रात्रिमें ८।१४ बजेसे, मोहिनी- एकादशीव्रत (सबका) प्रदोषव्रत। तुलाराशि रात्रिमें १।२८ बजेसे, नृसिंहचतुर्थदशी। भद्रा प्रातः ५।४८ बजेसे सायं ५।४१ बजेतक, व्रतपूर्णिमा। पूर्णिमा, बुधपूर्णिमा, वैशाख-स्नान समाप्त।

कृपानुभूति

काशी विश्वनाथकी कृपाका फल

काशीकी महिमा और भगवान् शंकरकी दयालुताका वर्णन करते हुए गोस्वामीजी कहते हैं—

मुक्ति जन्म महि जानि ग्यान खानि अघ हानि कर।

जहँ बस संभु भवानि सो कासी सेइअ कस न॥

जरत सकल सुर बूंद बिषम गरल जेहि पान किय।

तेहि न भजसि मन मंद को कृपाल संकर सरिस॥

अर्थात् जहाँ श्रीशिव-पार्वती बसते हैं, उस काशीको

मुक्तिकी जन्मभूमि, ज्ञानकी खान और पापोंका नाश करनेवाली जानकर उसका सेवन क्यों न किया जाय? तथा जिस भीषण हलाहल विषसे सब देवतागण जल रहे थे, उसको जिन्होंने स्वयं पान कर लिया, रे मन्द मन! तू उन शंकरजीको क्यों नहीं भजता? उनके समान कृपालु और कौन है?

भगवान् काशी विश्वनाथकी कृपालुताकी अनेक घटनाएँ प्रसिद्ध हैं। यहाँ उनकी कृपाकी एक सत्य घटना प्रस्तुत की जा रही है—

भारतके पूर्वोत्तरमें नागालैण्ड प्रान्त है। इस नागा भूमिके लोग अपनेको नागजातिका मानते थे। जबसे उन्होंने स्वधर्म छोड़ा तबसे वे अपनेको नागा कहने लगे। १९६३ ई०में असमके नागाबहुल पहाड़ी जिलों डिमाछा, करबी आदिको मिलाकर नागालैण्ड बना। आज वहाँके लगभग ७० प्रतिशत नागा ईसाई बन चुके हैं।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघमें पूर्णकालिक कार्यकर्ताओंको देशके किसी भी प्रान्तमें सेवाहेतु भेजनेका प्रावधान है। नागालैण्डमें भी संघके स्वयंसेवक सेवामें लगे हैं। आजसे लगभग ३० वर्ष पहलेकी बात है, केरलसे कृष्णगोपाल संघके प्रचारक बनकर नागालैण्डमें आये। एक नागा युवती उनके सम्पर्कमें आयी और उनके विचारोंसे प्रभावित होकर उनसे प्रेम करने लगी। एक दिन अपने पिताका घर छोड़कर वह उनके पास चली

नागा लड़कीने भी हिन्दू बनना स्वीकार किया। कृष्णगोपालने उसका नाम 'अक्षया' रखा। नागा लड़की ने 'अक्षया' नाम सहर्ष स्वीकर कर लिया। अक्षयाने अपना रहन-सहन, खान-पान—सब बदल दिया। पिताके घर वह मांस-मछली खाती थी, पर जबसे कृष्णगोपालकी पत्नी बनी, उसी दिनसे उसने मांस-मछली खाना सदाके लिये छोड़ दिया।

उन दोनोंका दाम्पत्य-जीवन सुखपूर्वक बीत रहा था, परंतु शादीके १० वर्ष होनेपर भी अक्षया माँ न बन सकी थी। उसने सुना, जो सच्चे मनसे काशी विश्वनाथकी विधिवत् पूजा करता है, उसे भगवान् काशी विश्वनाथ संतान देते हैं। अक्षयाको इस बातपर विश्वास हुआ तो वह कृष्णगोपालके साथ काशी गयी। दोनों विश्व हिन्दू परिषद् कार्यालयमें ठहरे। दूसरे दिने वे भगवान् विश्वनाथके मन्दिर गये। मन्दिरके पुजारीने बड़ी श्रद्धाभक्तिसे विधिवत् पूजा करायी।

पण्डितजीने पूजाके बाद कृष्णगोपाल और अक्षयाको मन्दिरमें आशीर्वाद दिया—'आप लोगोंने सच्चे मनसे विधिवत् काशी विश्वनाथकी पूजा की है। बाबा विश्वनाथ आप लोगोंको अवश्य ही एक पुत्र देंगे।'

ठीक दस माहके बाद नागालैण्डके डिमापुरमें अक्षयाने एक गोरे-चिट्टे पुत्रको जन्म दिया। उसने अपने पतिसे कहा—'मैं पुत्रका नाम 'विश्वनाथ' रखूँगी; क्योंकि मेरे पुत्रका जन्म काशी विश्वनाथके पूजनसे हुआ है।'

इस समय अक्षयाका पुत्र विश्वनाथ कक्षा दस उत्तीर्ण कर चुका है। अक्षया कहती है—'अगर कोई वास्तवमें सच्ची भक्ति-भावनाके साथ विधिवत् काशी विश्वनाथकी पूजाकर संतान माँगता है, तो भगवान् काशी विश्वनाथ उसके पुत्ररूपमें जन्म लेते हैं।'

पढ़ो, समझो और करो

(१)

सम्बन्धोंकी सुगन्ध

जिनके पास पैसा है और जो उसे अच्छे कार्यमें लगाते हैं, वे निश्चय ही श्रद्धाके पात्र होते हैं। मगर जिनके पास पैसा नहीं होता और जो तंगीमें जीवन व्यतीत करते हैं, वे यदि पैसेका मोह त्यागकर उदारतासे दूसरोंकी सहायता करते हैं, तो वे भी कम स्तुत्य नहीं होते। इस सन्दर्भमें मुझे एक घटना स्मरण आती है, लखन नामका सामान्य आर्थिक स्थितिवाला एक व्यक्ति था, जो सज्जनपुरा गाँवका रहनेवाला था। उसकी बेटीका विवाह था। इसलिये उसने गाँवके एक व्यक्तिसे दस हजार रुपये कर्जपर ले लिये। लखनका एक बेटा मुम्बईमें किसी कारखानेमें काम करता था। वह घरसे अलग रहता था और अपना खर्च स्वयं चलाता था। उसकी भी एक बेटी थी, जिसके विवाहहेतु उसने दूरदर्शितापूर्वक कुछ रुपये बचा रखे थे। उसने लखनसे कहा, 'पिताजी, मैंने कुछ पैसे अपनी बेटीके विवाहहेतु बचा रखे हैं, परन्तु अभी उसके विवाहमें देर है, अतः आप वे पैसे बहनकी शादीमें लगा दीजिये और जो कर्ज लिया है, उसे लौटा दीजिये।'

आजकल कौन बेटा अपने पिता और बहनकी चिन्ता करता है। प्रायः सबको अपनी, अपने पत्नी-बच्चोंकी चिन्ता पहले रहती है। कहावत भी है कि पहले घरमें दीया जलाया जाता है, फिर मस्जिदमें। आज हर बाप अपने बेटेके लिये दूरकी मस्जिद हो गया है। मैं किसीको दोष नहीं देता हूँ, मैं इसे अर्थयुग की विषमता ही समझता हूँ, जो आदमीको इन्सानी जज्बातोंसे शून्य कर देती है। ऐसे समयमें लखनका बेटा मुझे श्रवणकुमार-सरीखा प्रतीत होता है।

एक धनाढ्य परिवारका उदाहरण देना चाहूँगा। बेटीका विवाह था और पिताका हाथ बिलकुल तंग था। हाथ खुला हो अथवा तंग, बेटीका विवाह तो पिताको करना ही पड़ता है। कन्याके पिताने भी भगवान्के भरोसे विवाह मान लिया था। कुंकुम पत्रिका भी छपा ली थी, मगर कहींसे कोई मदद या इन्तजाम नहीं हो सका था।

कन्याका पिता अपनी बुआके बेटेके पास गया, उसे कुंकुम पत्रिका दी और सिर नीचे करके बैठ गया। बुआका बेटा सम्पन्न था, भाईकी स्थितिको समझता था। वह फौरन उठकर दूसरे कमरेमें गया और एक लिफाफेमें रखकर दो लाख रुपये ले आया। भाई को लिफाफा देते हुए बोला, 'भाई, बेटीका विवाह खूब आनन्दसे करना और भी कोई काम हो तो मुझे बतानेमें संकोच मत करना।' आज लोगोंके पास दो पैसा आ जाता है, तब उनका दिल ही नहीं, नजर भी बदल जाती है। मदद करना और मीठा बोलना तो दूरकी बात, वे अपने गरीब सम्बन्धियों, यहाँतक कि सगे भाइयोंको भी नहीं पहचानते हैं। ऐसेमें उक्त प्रसंगोंको याद करता हूँ तब आँखें श्रद्धासे झुक जाती हैं। ऐसे प्रसंग पारिवारिक सम्बन्धोंमें सुगन्ध घोल देते हैं, जिनसे व्यक्ति ही नहीं, समाज भी सुगन्धित हो उठता है।—नन्दलाल टांटिया

(२)

अपना अपना ही होता है।

यह घटना काफी पुरानी है, पर है सच्ची घटना। मेरे पड़ोसमें किशनलालजी पटेल रहते थे, जिनका परिवार कृषिका व्यवसायकर अपना जीवन-यापन करता था। उनके दो पुत्र थे। दोनों भाइयोंमें अच्छा प्रेमभाव था। परन्तु पिताके स्वर्गवासी होनेपर लोगोंके बहकानेमें एवं पत्नीकी शहपर छोटे भाईने बड़ेसे झगड़ा कर लिया और जमीन-जायदाद बाँटकर अलग-अलग रहने लगे। बोलचाल आपसमें बन्द हो गयी।

एक दिन गाँवके मन्दिरमें रात्रि-जागरण था। दोनों भाई भी आ गये। जागरण शुरू हुआ ही था कि अचानक वर्षा होने लगी, अतः लोगोंका ध्यान बाहर पड़ी जूतियोंके बरामदेमें रखने लगे। बड़ा भाई भी उठकर गया। उसने पहले छोटे भाईकी जूतियाँ बरामदेमें रखीं और फिर अपनी रखीं। छोटा भाई यह सब देख रहा था। बड़े भाईका यह भ्रातृप्रेम देखकर उसकी आँखोंमें आँसू छलक आये और उसी समय उसने बड़े भाईसे क्षमा माँगी। दोनों

(३)

आज भी ईमानदारी जिन्दा है

लगभग पचास वर्ष पहलेकी बात है, विदेशसे हमलोग बम्बईके शान्ताक्रूज हवाई अड्डेपर उतरे। लम्बी हवाई सफरकी थकावट थी। जल्दी किसी अच्छे होटलमें जानेके लिये एक टैक्सी लेकर हम दोनों—पति-पत्नी मेरिन ड्राइवकी ओर बढ़े। वहाँ तीन-चार होटलोंमें पूछताछ की, पर स्थान रिक्त न होनेके कारण आगे बढ़ना पड़ा। रात्रिके दो बजे हमें एक अच्छे होटलमें स्थान मिला। ड्राइवरने टैक्सीसे सामान निकालकर होटलके कर्मचारीको सौंप दिया और अपना किराया लेकर वह विदा हो गया। लिफ्टसे होटलके ऊपरके तल्लेमें पहुँचनेपर जब हमलोग अपना सामान सँभालने लगे, तब मुझे अपना 'ब्रीफकेस' वहाँ नहीं दिखायी दिया। ब्रीफकेस न देखकर मेरी दशा ऐसी हो गयी मानो मुझपर बिजली गिर पड़ी हो। मेरा मस्तिष्क चिन्तासे भर गया, मेरी स्थिति किंकर्तव्यविमूढ़की-सी हो गयी। अपनेको सँभालकर मैंने तुरंत टेलीफोन उठाया और होटलके मैनेजरसे फोनपर पूछा। उत्तर मिला—'टैक्सीका सभी सामान आपके कमरेमें पहुँचा दिया गया है।' अब शंका होने लगी कि ब्रीफकेस शायद हवाई अड्डेपर छूट गया हो, अतः छूटे हुए सामानको सुरक्षित रखनेवाले कार्यालयको फोन किया, किंतु वहाँसे उत्तर मिला—'रातके ४ बज रहे हैं, इस समय कुछ भी नहीं हो सकेगा। आप सुबह फोन कर लें।'

हमलोगोंकी नींद हराम हो गयी। विचार-विमर्श करते ही सूर्योदय हो गया। मेरी पत्नी तो प्रार्थना कर रही थी और कह रही थी कि 'हमारे हककी चीज कहीं नहीं जा सकती, कहींसे मिल ही जायगी।' परंतु मुझे उसकी बातपर विश्वास नहीं हो रहा था। मैंने उसे उत्तर दिया—'यह बम्बई नगरी है, यहाँ गयी हुई चीज वापस नहीं मिलती।'

हमलोग इस प्रकार बात कर ही रहे थे कि नीचेसे होटलके मैनेजरका टेलीफोन आया—‘महाशयजी ! नीचे आइये, एक सज्जन आपसे मिलने आये हैं । उनके हाथमें

एक ब्रीफकेस भी है, शायद वह आपका ही हो।' आशाकी एक किरन चमकी, हृदयमें कुछ सान्त्वना आयी। मैं तुरंत लिफ्टसे नीचे आया देखा—वही रातवाला टैक्सी—ड्राइवर ब्रीफकेस लिये खड़ा है। मैं उससे कुछ पूछूँ, इससे पहले ही वह बोल उठा—'साहब! मुझे बहुत दुःख है और मैं इसके लिये शर्मिन्दा हूँ कि रातको आपका ब्रीफकेस टैक्सीमें ही रह गया। आपको बहुत परेशानी हुई होगी। मैं इसके लिये माफी चाहता हूँ।'।

उसके इतने शब्दोंसे मेरे दिलमें दम आया। झाड़वर कहता गया—‘अभी प्रातःकाल सूर्योदय होनेपर जब मैं टैक्सीकी सफाई करने लगा तो मुझे यह ब्रीफकेस दिखायी दिया और मैं तुरंत इसको लेकर यहाँ दौड़ा आया हूँ।’ यह कहते हुए उसने ब्रीफकेस मेरे हाथमें थमा दिया और फिर बोला—‘साहब! इसे अभी खोलकर देख लीजिये, आपका सब सामान दुरुस्त है न?’

मैंने ब्रीफकेस खोलकर देखा, सभी सामान यथावत् था। मैंने जेबसे सौ रुपये निकाले और ड्राइवरको देते हुए कहा—‘आपको बहुत-बहुत धन्यवाद! हम आपके आभारी हैं। भारत-भ्रमणके लिये जो कुछ रकम हमलोग लाये थे, वह सब इसीमें थी। यह लीजिये आपका इनाम।’

‘नहीं साहब! इनाम लेनेसे ईमान चला जाता है, हमें आप मिल गये और हमने आपकी चीज सही रूपमें सौंप दी, यह मालिककी कृपा है। वर्ना मुझे पुलिस चौकीमें जाना पडता। अच्छा नमस्कार...!’

टैक्सी-ड्राइवर चला गया। कुछ दिनों बाद जब मैं विदेश लौटा, तब वहाँके अपने मित्रोंसे मैंने गर्वसे कहा—‘हमारे भारतमें आज भी ईमानदारी जिन्दा है।’ ‘अखण्ड आनन्द’—यसुफ नूर कीडी

$$(\gamma)$$

खुरहा रोगका प्राकृतिक उपचार

प्रकृतिमें व्याधिनिवारणकी असामान्य क्षमता होती है। प्रकृतिके प्रधान घटक वृक्ष प्राणिमात्रका अनेक प्रकारसे उपकार करते हैं। इन्हीं वृक्षोंमें एक वृक्ष बबूल (देशी) है, जिसके विभिन्न अवयवोंका मनुष्यों तथा पशुओंके रोग-निवारणमें उपयोग होता है।

उस समय बिलासरायजीको कितनी प्रसन्नता हुई और मित्र हनुमानबक्सजीके प्रति उनका हृदय सदाके लिये कितना कृतज्ञ हो गया, उसका पूरा अनुमान भी नहीं लगा सकते। धन्य मैत्री!—**ब्रजमोहन गुप्त**

मनन करने योग्य

धर्मो रक्षति रक्षितः

वनवासके समय पाण्डव द्वैतवनमें थे। वनमें घूमते समय एक दिन उन्हें प्यास लगी। धर्मराज युधिष्ठिरने वृक्षपर चढ़कर इधर-उधर देखा। एक स्थानपर हरियाली तथा जल होनेके अन्य चिह्न देखकर उन्होंने नकुलको जल लाने भेजा। नकुल उस स्थानकी ओर चल पड़े। वहाँ उन्हें स्वच्छ जलसे पूर्ण एक सरोवर मिला; किंतु जैसे ही वे सरोवरमें जल पीने उतरे, उन्हें यह वाणी सुनायी पड़ी—‘इस सरोवरका पानी पीनेका साहस मत करो! इसके जलपर मैं पहले ही अधिकार कर चुका हूँ। पहले मेरे प्रश्नोंका उत्तर दे लो, तब पानी पीना।’

नकुल बहुत प्यासे थे। उन्होंने उस बातपर, जिसे एक यक्ष कह रहा था, ध्यान नहीं दिया। लेकिन जैसे ही उन्होंने सरोवरका जल मुखसे लगाया, वैसे ही निर्जीव होकर पृथ्वीपर गिर पड़े।

इधर नकुलको गये बहुत देर हो गयी तो युधिष्ठिरने सहदेवको भेजा। सहदेवको भी सरोवरके पास यक्षकी वाणी सुनायी पड़ी। उन्होंने भी उसपर ध्यान न देकर जल पीना चाहा और वे भी प्राणहीन होकर गिर गये। इसी प्रकार धर्मराजने अर्जुनको और भीमसेनको भी भेजा। वे दोनों भी बारी-बारीसे आये और उनकी भी यही दशा हुई।

जब जल लाने गये कोई भाई न लौटे, तब बहुत थके होनेपर भी स्वयं युधिष्ठिर उस सरोवरके पास पहुँच गये। अपने देवोपम भाइयोंको प्राणहीन पृथ्वीपर पड़े देखकर उन्हें अपार दुःख हुआ। देरतक भाइयोंके लिये शोक करके अन्तमें वे भी जल पीनेको उद्यत हुए। उन्हें पहले तो यक्षने बगुलेके रूपमें रोका; किंतु युधिष्ठिरके पूछनेपर कि—तुम कौन हो? वह यक्षके रूपमें एक वृक्षपर दिखायी पड़ा।

शान्तचित्त धर्मात्मा युधिष्ठिरने कहा—‘यक्ष! मैं

सरोवरके जलपर पहले ही अधिकार कर लिया है, तो वह जल तुम्हारा रहे। तुम जो प्रश्न पूछना चाहते हो पूछो। मैं अपनी बुद्धिके अनुसार उनका उत्तर देनेका प्रयत्न करूँगा।’

यक्षने अनेकों प्रश्न पूछे। युधिष्ठिरने सभी प्रश्नोंका उचित उत्तर दिया। उनके उत्तरोंसे सन्तुष्ट होकर यक्षने कहा—‘राजन्! तुमने मेरे प्रश्नोंके ठीक उत्तर दिये हैं; इसलिये अपने इन भाइयोंमेंसे जिस एकको चाहो, वह जीवित हो सकता है।’

युधिष्ठिर बोले—‘आप मेरे छोटे भाई नकुलको जीवित कर दें।’ यक्षने आश्चर्यके स्वरमें कहा—‘तुम राज्यहीन होकर वनमें भटक रहे हो, शत्रुओंसे तुम्हें अन्तमें संग्राम करना है, ऐसी दशामें अपने परम पराक्रमी भाई भीमसेन अथवा शस्त्रज्ञचूड़ामणि अर्जुनको छोड़कर नकुलके लिये क्यों व्यग्र हो?’

धर्मराज युधिष्ठिरने कहा—‘यक्ष! राज्यका सुख या वनवासका दुःख तो भाग्यके अनुसार मिलता है; किंतु मनुष्यको धर्मका त्याग नहीं करना चाहिये। जो धर्मकी रक्षा करता है, धर्म स्वयं उसकी रक्षा करता है। इसलिये मैं धर्मको स्वयं नहीं छोड़ूँगा। कुन्ती और माद्री दोनों मेरी माता हैं। कुन्तीका पुत्र मैं जीवित हूँ। अतः मैं चाहता हूँ कि मेरी दूसरी माता माद्रीका वंश भी नष्ट न हो। उनका भी एक पुत्र जीवित रहे। तुम नकुलको जीवित करके दोनोंको पुत्रवती कर दो।’

यक्षने कहा—‘तुम अर्थ और कामके विषयोंमें परम उदार हो, अतः तुम्हारे चारों भाई जीवित हो जायँ। मैं तुम्हारा पिता धर्म हूँ। तुम्हे देखने तथा तुम्हारी धर्मनिष्ठाकी परीक्षा लेने आया था।’

धर्मने अपना स्वरूप प्रकट कर दिया। चारों

Dear Contributors,

Bhakti annual number of **Kalyana-Kalpataru** published last year, was well received by our kind readers. It is only due to Divine Grace and affectionate efforts of our contributors. This year we propose to publish **Welfare to All** as **annual number** in **2018**.

The whole universe which we see around us, be it human beings, animals or plants or other life forms, all are manifestations of the Supreme Divine whom we call by different names. As human beings, it is our special responsibility to protect and help every part of this beautiful creation of God.

With this view in mind **Kalyana-Kalpataru** is to publish the next **annual number** in **October 2018** on **Welfare to All**. You are requested to send your articles on any of the topics suggested below or any other topic relevant to the theme. The write-up should be concise and lucid. Typed matter should be sent to reach us before **30th June, 2018**.

Welfare to All

1. What is real welfare 2. Why one should think of other's welfare? 3. Welfare vs. Achievement, development and growth 4. Physical vs. Spiritual welfare 5. Social vs. Individual welfare
6. **Dimensions of welfare:** (i) Spiritual Quest (ii) Intellectual pursuits (iii) Material Development (iv) Social Reforms (v) Moral Uplift (vi) Discoveries and Innovations (vii) Compassion and Empathy (viii) Environmental Protection
7. Universal welfare 8. National welfare 9. Welfare of Nature—Protection and growth
10. **Welfare of Humankind:** (i) Child Welfare (ii) Women Welfare (iii) Welfare of poor and helpless (iv) Welfare of patients
11. Welfare of animals and birds 12. Welfare of Plant-life and forests 13. Helping victims of natural calamities—flood, earthquake, fire, cyclone 14. God-realization through altruistic attitude 15. Sāadhanā for developing altruistic attitude 16. Welfare through positive thought, word and action 17. Shining instances of spreading welfare: Puranic characters like Rantideva and others Historical characters—
(i) Gautam Buddha (ii) Mahātmā Gāndhī (iii) Florence Nightingale (iv) Swāmī Rāmānujācārya (v) Abraham Lincoln (vi) Others.

Modern instances of exemplary altruistic behaviour

‘कल्याण’ नामक हिन्दी मासिक पत्रके सम्बन्धमें विवरण

- १- प्रकाशनका स्थान—गीताप्रेस, गोरखपुर, २-प्रकाशनकी आवृत्ति—मासिक
- ३- मुद्रक एवं प्रकाशकका नाम—केशोराम अग्रवाल, (गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये), राष्ट्रगत सम्बन्ध—भारतीय, पता—गीताप्रेस, गोरखपुर
- ४-सम्पादकका नाम—राधेश्याम खेमका, राष्ट्रगत सम्बन्ध—भारतीय, पता—गीताप्रेस, गोरखपुर
- ५- उन व्यक्तियोंके नाम-पते जो इस पत्रिकाके मालिक हैं और जो इसकी पूँजीके भागीदार हैं:—गोबिन्दभवन-कार्यालय, १५१, महात्मा गाँधी रोड, कोलकाता (पश्चिम बंगाल सोसाइटी पंजीयन अधिनियम १९६१ के अन्तर्गत पंजीकृत)।

मैं केशोराम अग्रवाल गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये इसके द्वारा यह घोषित करता हूँ कि ऊपर लिखी बातें मेरी जानकारी और विश्वासके अनुसार यथार्थ हैं।

केशोराम अग्रवाल (गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये)—प्रकाशक



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!

गीताभवन, स्वर्गाश्रमके सत्संगकी सूचना



गीताभवन, स्वर्गाश्रम ऋषिकेशमें ग्रीष्मकालमें सत्संगका लाभ श्रद्धालु एवं आत्मकल्याण चाहनेवाले साधकोंको प्रारम्भसे ही प्राप्त होता रहा है। पूर्वकी भाँति इस वर्ष भी चैत्र शुक्ल एकादशी (२७ मार्च)–से सत्संगका आयोजन किया गया है। इस अवसरपर संत-महात्मा एवं विद्वद्गणोंके पधारनेकी बात है। गीताभवनमें चैत्र एवं आश्विन नवरात्रमें श्रीरामचरितमानसका सामूहिक नवाह-पाठका कार्यक्रम रहता है। गीताभवनमें आयोजित दुर्लभ सत्संगका लाभ श्रद्धालु और कल्याणकामी साधकोंको अवश्य उठाना चाहिये।

पूर्वकी भाँति इस वर्ष भी द्विजातियोंका सामूहिक यज्ञोपवीत संस्कार दिनांक १८ जून (शुद्ध ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी)–को होना निश्चित हुआ है, जिसकी पूजा १७ जूनको प्रारम्भ हो जायगी। इच्छुक जनोंको १६ जूनतक गीताभवन पहुँच जाना चाहिये।

गीताभवनमें संयमित साधक-जीवन व्यतीत करते हुए सत्संग-कार्यक्रमोंमें सम्मिलित होना अनिवार्य है। यहाँ आवास, भोजन, राशन-सामग्री आदिकी यथासाध्य व्यवस्था रहती है।

महिलाओंको अकेले नहीं आना चाहिये, उन्हें किसी निकट सम्बन्धीके साथ ही यहाँ आना चाहिये। गहने, महँगे मोबाइल आदि जोखिमकी वस्तुओंको, जहाँतक सम्भव हो, नहीं लाना चाहिये।

सत्संगमें आनेवाले साधकोंको मतदाता पहचान-पत्र अथवा फोटोयुक्त अन्य पहचान-पत्र रखना आवश्यक है।

व्यवस्थापक—गीताभवन, पो०-स्वर्गाश्रम—२४९३०४

प्रगति मैदान, नयी दिल्लीमें दिनांक ६ जनवरीसे १४ जनवरीतक आयोजित २६वें विश्व-पुस्तक मेलेमें गीताप्रेसका भव्य पुस्तक-स्टॉल



सीमित संख्यामें अभी उपलब्ध— गीता दैनन्दिनी २०१८ (कोड 506) पॉकेट साइज मूल्य ₹ ३५ एवं (कोड 1769) लघु आकार मूल्य ₹ २०।